अवतरण दिवस अर्थात् सेवा-सत्संग दिवस

पूज्य बापूजी के अवतरण-दिवस पर भारत भर में आध्यात्मिक जागृति हेतु हरिनाम संकीर्तन यात्राएँ निकाली गयीं, साथ ही गरीब-गुरबों, बेसहारा विधवाओं, अनाथों, आदिवासियों, अभावग्रस्तों व अस्पतालों में मरीजों को अन्न, फल, औषधि, वस्त्र, गर्म भोजन के डिब्बे आदि जीवनोपयोगी सामग्री तथा आर्थिक सहायता प्रदान कर कई-कई प्रकारों से सेवा-सुवास महकायी गयी ।

अम्बिकापुर (छ.ग.) | पुणे (महा.) | होन्नावर (कर्नाटक)

अलीगढ़ (उ.प्र.) | निवाई (राज.) | हिम्मतनगर (गुज.)

बैंगलोर | जयपुर | औरंगाबाद (बिहार)

ईडर (गुज.) | झुन्झुनू (राज.) | कोलकाता
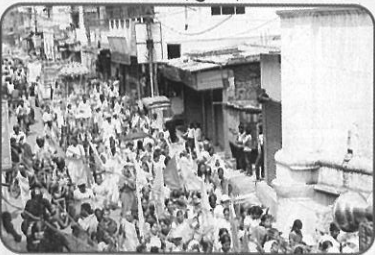
पटना (बिहार) | पुणे (महा.) | उज्जैन (म.प्र.)

ऋषि प्रसाद

मासिक पत्रिका

हिन्दी, गुजराती, मराठी, ओड़िया, तेलुगू, कन्नड, अंग्रेजी, सिंधी, सिंधी (देवनागरी) व बंगाली भाषाओं में प्रकाशित

वर्ष : २१ अंक : ११
भाषा : हिन्दी (निरंतर अंक : २३३)
१ मई २०१२ मूल्य : रु. ६-००
वैशाख-ज्येष्ठ वि.सं. २०६९

स्वामी : संत श्री आशारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
प्रकाशन स्थल : संत श्री आशारामजी आश्रम, मोटेरा, संत श्री आशारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद -३८०००५ (गुजरात).
मुद्रण स्थल : हरि ॐ मैन्युफेक्चरर्स, कुंजा मतरालियों, पौंटा साहिब, सिरमौर (हि.प्र.) - १७३०२५.

सम्पादक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
सहसम्पादक : डॉ. प्रे. खो. मकवाणा, श्रीनिवास

सदस्यता शुल्क (डाक खर्च सहित)

भारत में

अवधि	हिन्दी व अन्य भाषाएँ	अंग्रेजी भाषा
वार्षिक	रु. ६०/-	रु. ७०/-
द्विवार्षिक	रु. १००/-	रु. १३५/-
पंचवार्षिक	रु. २२५/-	रु. ३२५/-
आजीवन	रु. ५००/-	----

विदेशों में (सभी भाषाएँ)

अवधि	सार्क देश	अन्य देश
वार्षिक	रु. ३००/-	US $ 20
द्विवार्षिक	रु. ६००/-	US $ 40
पंचवार्षिक	रु. १५००/-	US $ 80

कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नकद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अपनी राशि मनीऑर्डर या डिमांड ड्राफ्ट ('ऋषि प्रसाद' के नाम अहमदाबाद में देय) द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

सम्पर्क पता : 'ऋषि प्रसाद', संत श्री आशारामजी आश्रम, संत श्री आशारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद-३८०००५ (गुज.).
फोन : (०७९) २७५०५०१०-११, ३९८७७७८८.
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site : www.ashram.org
: www.rishiprasad.org

इस अंक में...

विभिन्न टी.वी. चैनलों पर पूज्य बापूजी का सत्संग

A2Z NEWS	आस्था	संस्कार	care WORLD	सत्संग टी.वी.	वरदान	अध्यात्म टी.वी.	मंगलमय
रोज प्रातः ३, ५-३०, ७-३० बजे, रात्रि १० बजे तथा दोपहर २-४० (केवल मंगल, गुरु, शनि)	रोज सुबह ९-४० बजे	रोज दोपहर २-०० बजे	रोज सुबह ७-०० बजे	रोज रात्रि १०-०० बजे	रोज सुबह ८-४० बजे	रोज सुबह ९-०० बजे	२४ घंटे प्रसारण

सजीव प्रसारण के समय नित्य के कार्यक्रम प्रसारित नहीं होते।

✻ 'A2Z चैनल' डिश टी.वी. (चैनल नं. ५७९) तथा बिग टी.वी. (चैनल नं. ४२५) पर भी उपलब्ध है।
✻ 'संस्कार चैनल' डिश टी.वी. (चैनल नं. १११३) तथा बिग टी.वी. (चैनल नं. ६५१) पर भी उपलब्ध है।
✻ 'मंगलमय चैनल' इंटरनेट पर **www.ashram.org/live** लिंक पर उपलब्ध है।

बुद्धेः फलं अनाग्रहः

(पूज्य बापूजी की तात्त्विक अमृतवाणी)

सत्य अगर बुद्धि का विषय होता तो तीक्ष्ण बुद्धिवाले - मजिस्ट्रेट, न्यायाधीश, वकील आदि सत्यस्वरूप भगवान को, रब को अपनी तिजोरी में, अपनी जेब में रख लेते । संसारी कावे-दावे (चालबाजियों) में तीक्ष्ण बुद्धि काम आ सकती है लेकिन परमात्मा को पाना है तो पवित्र बुद्धि चाहिए । और बुद्धि वॉशिंग पाउडर से अथवा साबुन से पवित्र नहीं होती, लॉण्ड्री में पवित्र नहीं होती, वह तो व्रत-उपवास और सत्संग से पवित्र होती है और विलक्षण लक्षणों से सम्पन्न भी होती है ।

क्षिप्रं भवति धर्मात्मा... (गीता : ९.३१)

आपकी बुद्धि जैसा-जैसा सोचती है वैसी-वैसी बन जाती है । सारी मुसीबतों, दुःखों और कष्टों का मूल बुद्धि की अपरिपक्वता है । इसे शास्त्रीय भाषा में बोलते हैं :

प्रज्ञापराधो मूलं सर्वरोगाणाम् ।
प्रज्ञापराधो मूलं सर्वदोषाणाम् ।

सारे रोगों और दोषों का मूल है बुद्धि की बेवकूफी । आपको पता है ? श्रीकृष्ण का अवतार और सामर्थ्य अद्‌भुत था, चतुर्भुजी हो जाते थे । ऐसे कृष्ण के जीवन में भी कई मित्र आये, यश गानेवाले और विरोधी हो गये । कई विरोधी सुधरकर शरणागत हो गये । श्रीकृष्ण की संतानें श्रीकृष्ण का विरोध करने लगीं परंतु उन्होंने कभी आग्रह नहीं किया कि मेरे बेटे ऐसा क्यों करते हैं ? सबकी अपनी-अपनी मति है, सबकी अपनी-अपनी गति है । 'मेरा भाई ऐसा है, मेरा बेटा ऐसा है, मेरा पति ऐसा है, ऐसा नहीं हो...' आप यह बुद्धि का दुराग्रह छोड़ दीजिये ।

बुद्धि का फल क्या है ?

बुद्धेः फलं अनाग्रहः । बुद्धि का फल है भोगों में और संसार की घटनाओं में आग्रह नहीं रहना । भगवान शिवजी समाधि में रहनेवाले हैं और उनके घर में भी देखो, शिवजी नहीं चाहते थे फिर भी सती गयीं पिता के घर । शिवजी के ससुर होने पर भी दक्ष का सिर कट गया । तो जरूरी नहीं है कि जो आप चाहें वही हो । हम दुःखी क्यों होते हैं ? क्योंकि बुद्धि में दुराग्रह होता है : 'ऐसा होना चाहिए, ऐसा नहीं होना चाहिए ।'

हिरण्यकशिपु की इतनी भारी तपस्या थी कि ब्रह्माजी को खिलौना बना दिया, बोला : ''ले बेटा ! खेल इनसे... ये चतुरानन ब्रह्माजी हैं । ले इनसे खेल तू ।'' हिरण्यकशिपु अपने पुत्र प्रह्लाद को ऐसे-ऐसे खिलौने देकर अपने पक्ष में करना चाहता था लेकिन प्रह्लाद उन खिलौनों में उलझे नहीं, बोले : ''पिताजी ! ये सब बाहर ले जाते हैं, मुझे तो अंतरात्मा में तृप्ति है ।''

हिरण्यकशिपु चकित होकर पूछता : ''बेटा ! तू इतना-सा है और तुझे इतना बड़ा ज्ञान कैसे ?''

प्रह्लाद की माँ नारदजी के आश्रम में रहती थी क्योंकि पति जंगल में चले गये थे और महल पर इन्द्र ने धावा बोल दिया था । अब वह चिंता करती है कि 'मैं गर्भवती हूँ । नौ महीने हो गये, दसवाँ पूरा हो रहा है । इधर बाबा के आश्रम में मुझे प्रसूति होगी तो कैसा लगेगा ?'

नारदजी समझ गये । बोले : ''बेटी ! तू चिंता न कर । मैं तुझे 'इच्छा-प्रसूति' का वरदान देता हूँ । चाहे दस साल बीत जायें, चाहे पचास

साल बीत जायें, जब भी तेरा पति आये और तू चाहे तभी प्रसूति होगी। बालक का कद नहीं बढ़ेगा, सत्संग के द्वारा उसकी बुद्धि बढ़ेगी। तू ध्यान से सत्संग सुन।''

नारदजी के वचन के अनुसार वर्षों तक प्रह्लाद गर्भ में रहा तो सवाल उठेगा कि कयाधू की बुद्धि क्यों नहीं बढ़ी ? कयाधू की बुद्धि बहुत विषयों में उलझी थी कि 'मेरे पति का क्या होगा ? मेरे ननिहाल में क्या होता होगा ? मेरे मायकेवालों का क्या होता होगा ? मेरे महल का क्या होता होगा ?' जब आप बहुत सारी चीजों में अपनी बुद्धि को भटकाते हो तो बुद्धि क्षीण हो जाती है।

हम घर छोड़कर गये तो क्यों गये ? बहुत विषयों से बचने के लिए। मौनमंदिर में किसी साधक को मैं भेजता हूँ तो चमत्कारिक लाभ होता है क्योंकि एक ही विषय में, जप-ध्यान में बुद्धि लगती है।

अगर बुद्धि को भगवत्प्राप्ति के योग्य बनाना है तो फिल्में, अखबार, चुटकुले, टी.वी. के कार्यक्रम देखकर बुद्धि को बिखेरो मत। बच्चों को भी बहुत सारे सामान में उलझाओ मत। जो जरूरी है वह करो, बाकी को समेट लो। जब बुद्धि बाहर सुख दिखाती है तो क्षीण हो जाती है और जब अंतर्मुख होती है तो महान हो जाती है; तब उस बुद्धि को 'ऋतम्भरा प्रज्ञा' बोलते हैं - 'ऋत' माने 'सत्य' से भरी हुई बुद्धि।

बुद्धि नष्ट कैसे होती है ?

जो काम है, वासना है कि 'यह मिल जाय, यह मिल जाय, यह पाऊँ, यह भोगूँ...'- इससे बुद्धि छोटी हो जाती है। अपने-आपमें अतृप्त रहना, असंतुष्ट रहना इससे बुद्धि कमजोर हो जाती है। किसीके प्रति राग-द्वेष करने से भी बुद्धि कमजोर हो जाती है।

अगर देखने का मजा, स्वाद का मजा लेने की दृढ़ता बनी रही तो पतंगे की, मछली की योनि में जायेंगे। सुगंध के मजे की आदत पड़ गयी तो भौंरा बन जायेंगे। संत तुलसीदासजी कहते हैं :

अली पतंग मृग मीन गज, एक एक रस आँच।
तुलसी तिनकी कौन गति, जिनको ब्यापे पाँच ॥

तो इन चीजों का मजा लेकर अपने को इनके अधीन बनाने से बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। संसारी कामनाओं से बुद्धि बिगड़ती है, अतृप्ति होती है, राग-द्वेष होता है। स्पर्धा, भय व क्रोध आदि से बुद्धि कमजोर होती है।

बुद्धि महान कैसे होती है ?

सत्य बोलने से बुद्धि विलक्षण लक्षणों से सम्पन्न होती है। विषयों से मजा लेकर अपने को उनके अधीन करने से बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। इन चीजों का उपयोग करके अपने को परमात्म-रस से तृप्त करने से बुद्धि महान हो जाती है। भगवान के, गुरु के चिंतन से बुद्धि तृप्त होती है, राग-द्वेष मिटता है, कामनाएँ शांत होती हैं। भगवान और गुरु के चिंतन से सारे दोष चले जाते हैं।

तो जिन कारणों से बुद्धि उन्नत होती है वे सत्संग में मिलते हैं और जिन कारणों से बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है उनसे बचने का उपाय भी सत्संग में मिलता है। इसलिए सत्संग से जो पुण्य, जो समझ और जो फायदा होता है वह साठ हजार वर्ष तपस्या करने से भी नहीं होता। इतना तप करनेवाले, संकल्प से खेत-खलिहान और समुद्र पर हुकूमत करनेवाले, वरुण, कुबेर और ब्रह्माजी जैसों को खिलौना बनाकर बेटे को देनेवाले हिरण्यकशिपु का सोने का हिरण्यपुर आज कहाँ है ? उसका राज्य कहाँ है ? देखा जाय तो हिरण्यकशिपु लौकिक जगत में बहुत पहुँचा हुआ व्यक्ति था। जब ऐसे पहुँचे हुए व्यक्ति का राज्य नहीं रहा तो हमारी बेईमानी की सम्पत्ति, भ्रष्टाचार का अथवा कहीं किसीको नोचकर इकट्ठा किया

हुआ धन कब तक रहेगा ? हिरण्यकशिपु ने तपस्या से जो इतना पाया था वह भी मिट गया, मटियामेट हो गया तो आपकी चिंता से आपके कारखाने में बन-बनकर कितने रुपये बनेंगे ? आपकी दुकान में कितने बनेंगे और कब तक रहेंगे ? असंतुष्टि आदमी की बुद्धि को भ्रमित कर देती है। इसलिए 'गीता' कहती है : **संतुष्टः सततं योगी...**

जो धन मिल गया मिल गया, चला गया तो उसको याद करके परेशान मत होओ। जो मान मिल गया मिल गया, अपमान हो गया तो हो गया। मान भी सपना है, अपमान भी सपना है उनको जाननेवाला परमेश्वर अपना है। बोले : 'मैं तो उसको दिन के तारे दिखा दूँगा, मैं तो छठी का दूध याद दिला दूँगा।' अरे, तेरा मन तेरा नहीं मानता है तो वे सब तेरा मानें ऐसा जरूरी है क्या ? 'बहू कहना नहीं मानती, बेटा कहना नहीं मानता, फलाना कहना नहीं मानता...' - यह बुद्धि की नालायकी है जो आपको परेशान करती है। माने-न माने वह जाने। हमारा मन भी हमारा कहना नहीं मानता तो दूसरे ने नहीं माना इसमें कौन-सी बड़ी बात हुई ? सब चलता रहता है। जब तक मानते हैं तो मानते हैं, नहीं मानें तो उनकी मर्जी !

अपने को दुःखी न करो। अपने को किसीका वैरी मत बनाओ। अपने को किसीका रागी मत बनाओ, किसीका द्वेषी मत बनाओ। अपने को तो आप जिसके हैं उसीको पानेवाला बनाओ। आप परमात्मा के हैं और परमात्मा को पा लो बस। इससे आपकी बुद्धि बहुत ऊँची हो जायेगी। कामनाएँ बढ़ें कि 'यह चाहिए, यह चाहिए...' तो मन से कह दो :

सौ की कर दो साठ, आधा कर दो काट।
दस पूरी करेंगे, दस छुड़ायेंगे, दस के जोड़ेंगे हाथ॥

अभी तो निष्काम नारायण में आनंदित होने दो। ॐ... ॐ... ॐ... ॐ...

इससे आपकी बुद्धि में चिन्मय सुख आयेगा।

कर्म व विचार भी पैदा करते हैं दिव्य तरंगें

(पूज्य बापूजी की पावन अमृतवाणी)

कानपुर में एक बाई हो गयी, वृद्ध थी। स्वामी राम (जिनका देहरादून में आश्रम है) के गुरु की वह शिष्या थी। उसको गुरु का ज्ञान मिल गया था। उसका बेटा मशहूर डॉक्टर था - डॉ. ए. एन. टंडन। उसने अपने पुत्र को बुलाया और बोली : ''अपने परिवार को बुलाओ, अब मैं संसार से जा रही हूँ। तुम रोना-पीटना नहीं। जो जानना था वह मैंने गुरुकृपा से जान लिया है। मेरी मौत नहीं होती, शरीर बदलता है। पाँच भूतों से शरीर बना है, पाँच भूतों में मिल जायेगा। मिट्टी से घड़ा बना है और मिट्टी में मिल जायेगा, आकाश महाकाश से मिल जायेगा, ऐसे ही आत्मा परमात्मा से मिल जायेगा। तुम रोना-धोना नहीं। गुरु की कृपा से मेरी मोह-ममता मिट गयी है।''

टंडन : ''माँ ! तुम क्या कह रही हो ? तुम कैसे जाओगी ! हमारा रहेगा कौन ?''

फिर तो माँ हँसने लगी : ''बेटे ! तू अब रो-धो के, 'माँ-माँ' करके मेरे को फँसा नहीं सकता। यह सब धोखा है। 'यह मेरी माँ, यह मेरा बेटा...' यह सदा टिकता नहीं और जो वास्तव में है वह कभी मिटता नहीं। जो कल्पना में है वह कभी टिकता नहीं। कितने जन्मों के बेटे, कितने जन्मों के बाप, कितने जन्मों के पत्नियाँ-पति मानती थी, वे सब छूट गये, अभी भी छूटनेवाले ही हैं। यह मेरा मकान... न तो मकान रहेगा, न मकानवाला रहेगा। कभी-न-कभी दोनों का वियोग होगा। ये तो सब ऐसे ही हैं।''

'अरे, मेरा मकान चला गया...' जानेवाला ही था। 'मेरा बाप भी चला गया, दादा भी चला गया...' यहाँ सब जानेवाले ही आते हैं।

बोले : 'महाराज ! मेरे मन में ऐसा है, ऐसा है।' अरे, तेरा एक मन क्या है, हजारों-लाखों मन जिसमें हैं तू वह आत्मा है। एक मन की क्या सोचता है ! 'मेरा मन ऐसा है, ऐसा हो जाय...' इसका मतलब 'मेरा कुत्ता ऐसा हो जाय...' अपने को जान ! मन को तू मन समझ और शरीर को शरीर, बुद्धि को बुद्धि समझ। दुःख व सुख को आने-जानेवाला समझ और उसको जाननेवाले को 'मैं' रूप में जान ले तो अभी ईश्वरप्राप्ति... यूँ ! इतनी सरल है !

सरल है इसलिए राजा जनक को घोड़े की रकाब में पैर डालते-डालते आत्मा-परमात्मा की प्राप्ति हो गयी थी। राजा परीक्षित को सात दिन में भगवान मिल गये थे। हमने भगवान को खोजने के लिए खूब दर-दर के चक्कर लगाये। फिर कोई बोले : ''अयोध्या में जहाँ बहुत साधु रहते हैं, वहाँ चले जाओ।''

अयोध्या में तो पाँच हजार साधु रहते हैं। अब पाँच हजार साधुओं में से दस-दस साधुओं को एक-एक दिन में मिलें तो भी डेढ़ साल लग जायेगा। मैंने पाँच हजार साधुओं में से जो खूब पहुँचे हुए थे उनके नाम खोज लिये तो चार नाम आये। बोले : ''बहुत बड़ी उम्र के हैं, पहुँचे हुए हैं, त्यागी हैं।''

मैंने कहा : ''चार में से जो सबसे विशेष हों उनके बारे में बताओ।''

तो बताया गया : ''वे जो घास-फूस की झोंपड़ी में रहते हैं, लँगोटी पहने रहते हैं वे बहुत पहुँचे हुए हैं।''

मैं उनके पास गया और कहा : ''ईश्वरप्राप्ति के सिवाय मेरे को कुछ नहीं चाहिए।'' तो उन्होंने साधन बताया - १२ साल नाभि में धारणा कर जप करो, १२ साल नाभि से ऊपर, १२ साल हृदय में और १२ साल अन्य स्थान पर... ऐसे करके ४८ साल साधना करनी होगी। मैंने कहा : ''मैं तो एक साल भी नहीं रह सकता ईश्वरप्राप्ति के बिना। ४८ साल ये सब साधन मैं नहीं कर पाऊँगा।''

मैं तो वहाँ से चला और जब साँईं लीलाशाहजी बापू के पास गया तो मेरे को ४० दिन में परमात्मा की प्राप्ति हो गयी। कहाँ तो बोले ४८ साल के कोर्स के बाद भगवान मिलेंगे और कहाँ ४० दिन में मिल गये !

तो जैसे गुरु होंगे वैसा ही रास्ता दिखायेंगे। मेरे गुरुजी साँईं लीलाशाहजी बापू तो समर्थ थे। उन्होंने सत्संग सुना के ४० दिन में ब्राह्मी स्थिति करा दी। बाद में अयोध्या गया तो वही साधु जिसको मैं गुरु बनाने की सोचता था और जिसने ४८ साल का कोर्स बताया था उसने पहचाना ही नहीं, वही मेरा सत्कार करने लग गया। बोला : ''अच्छा आशारामजी ! तुम्हारा तो बड़ा नाम है, तुम मेरे को मदद कर सकते हो ?''

उसको पता नहीं कि डेढ़ साल पहले यही लड़का मेरे आगे हाथ जोड़कर उछल-कूद कर रहा था कि 'महाराज ! ईश्वरप्राप्ति करनी है, कृपा कर दो...।' वही आशाराम बापू हो गये। जब समर्थ गुरु मिल जाते हैं और अपनी तत्परता होती है तो झट्-से काम हो जाता है। कोई कठिन नहीं है।

तो कानपुर की उस बाई को ईश्वरप्राप्ति की लगन थी और उसके पास गुरु का ज्ञान था। बोली : ''बेटे ! ईश्वर को पाना है। मैं तो अभी शरीर छोड़ रही हूँ लेकिन जो कभी न छूटे उस परमेश्वर से एक होना है।''

बेटा : ''माँ... माँ...'' (रोने लगा।)

तो माँ हँसने लगी, बोली : ''तू अब अज्ञान और ममता से मुझे फँसा नहीं सकता। रोओ-धोओ मत ! कमरा छोड़ के बाहर जाओ, मैं अकेले में ईश्वर में लीन हो रही हूँ। कुंडी बंद नहीं करूँगी। एकाध घंटे के बाद दरवाजा खोल देना।''

एकाध घंटे के बाद देखा तो माँ एकदम प्रसन्नचित्त लेकिन प्राण ईश्वर में लीन हो गये थे।

तो उसका जो कुछ अग्नि-संस्कार करना था, किया। बाद में जिस कमरे में वह बाई रहती थी, ध्यान-भजन करती थी, उस कमरे में जिस मंत्र का वह जप करती थी उस मंत्र की ध्वनि आने लगी।

चैतन्य महाप्रभु ने भी जब शरीर छोड़ा तो जिस कमरे में वे रहा करते थे, उस कमरे से 'हरि ॐ... हरि ॐ...' की ध्वनि आती थी। टी.बी. (क्षयरोग) का मरीज मरता है न, तो जिस कमरे में वह रहता था उसी कमरे में कोई रहे तो उसको भी टी.बी. लग जाती है। ऐसे ही कोई भक्ति में, भगवान में एकाकार होकर शरीर छोड़ गया तो उस जगह पर दूसरों को भी भक्ति मिलती है। जहाँ जितना ऊँचा कर्म होता है, वहाँ उतनी ऊँची तरंगें होती हैं। ❑

अद्भुत है गीता का ईश्वर

– स्वामी श्री अखंडानंदजी सरस्वती

हम पूजा किसकी करें, किसके द्वारा करें, कौन-सी करें व पूजा करने से क्या प्राप्त होता है ? इन सभी प्रश्नों का उत्तर एक ही श्लोक में देख लो –

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम्।
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः॥

'जिस परमेश्वर से सम्पूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति हुई है और जिससे यह समस्त जगत व्याप्त है, उस परमेश्वर की अपने स्वाभाविक कर्मों द्वारा पूजा करके मनुष्य परम सिद्धि को प्राप्त हो जाता है।'

(गीता : १८.४६)

अद्भुत है गीता का ईश्वर ! यह वेदांतियों का निर्गुण ब्रह्म नहीं है। आर्य समाज, ब्रह्म समाज का निराकार नहीं है। जो कुरान-बाइबिल में जीवन से बहुत दूर रहता है, वह नहीं है। जिसने एक बार सृष्टि बनाकर फेंक दी, वह भी नहीं है। यह ईश्वर तो वह है जो सृष्टि का कण-कण बनाकर सृष्टि में ही रहता है। अतः उसी ईश्वर की पूजा करनी चाहिए जो विश्व से अलग-थलग नहीं है।

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम्।

भगवान सबके हृदय में अंतर्यामीरूप से प्रवर्तक है, प्रेरक है और जैसे कपड़े में सूत होता है वैसे ही सम्पूर्ण विश्व में उपादान कारण (कच्चा माल; घड़े का उपादान कारण मिट्टी है) और समवाय कारण (वह कारण या हेतु जो पृथक् न हो सके) के रूप में विद्यमान है और सर्वात्मक है। वह सर्वप्रेरक है अर्थात् चेतन है, अंतर्यामी है और सर्वात्मक है यानी सदात्मक है। जिस चीज को हम है-है-है (पहले थी, अभी है और बाद में भी रहेगी) बोल सकते हैं, वही भगवान है।

तात्पर्य यह है कि ईश्वर केवल व्यापक ही नहीं व्याप्य भी है, केवल जगत का कारण ही नहीं कार्य भी है। वही मनुष्य है, वही पशु है, वही पक्षी है, वही जल है, वही अग्नि है, वही वायु है, वही आकाश है। **येन सर्वमिदं ततम्** का अर्थ है कि ईश्वर हमारे जीवन से दूर नहीं, हमारे जीवन में अनुस्यूत है। हमारे चलने में है, हमारे करने में है, हमारे बैठने में है, हमारे सोने में है। यदि कहो कि ईश्वर कहाँ है ? तो कहाँ नहीं है ! ईश्वर कब है ? तो कब नहीं है ! ईश्वर क्या है ? तो क्या नहीं है ! ईश्वर अभी है, यहीं है और यही है।

देश-काल का व्यवधान ईश्वर और हमारे बीच में कभी होता ही नहीं। हमारे और ईश्वर के बीच में मन का, भावना का, भ्रम का पर्दा है। हमारे और ईश्वर के बीच में कोई दूसरी चीज नहीं है। ईश्वर का स्वरूप चेतन है, प्रेरक भी है। **धियो यो नः प्रचोदयात्। (ऋग्वेद : ३.६२.१०)** वही प्रेरक है, वही प्रकाशक है। **यतः प्रवृत्तिर्भूतानाम्** – सम्पूर्ण प्राणियों की प्रवृत्ति उसीसे हो रही है। बिच्छू में विष वहीं से आता है, सबकी अपनी-अपनी प्रवृत्ति वहीं से होती है। जिससे प्रवृत्ति होती है वह कौन है ? **येन सर्वमिदं ततम्** – वह तो सब है – कपड़ा है, सूत है, घड़ा है, मिट्टी है, औजार है, लोहा है, आभूषण है, सोना है।

ऐसा परमेश्वर जिसमें काल का, देश का, वस्तु का व्यवधान नहीं है, जो सर्वत्र, सर्वदेश में, सर्वरूप में है, वही आपका उपास्य है। 'गीता' में जिस उपास्य भगवान का वर्णन है वह यही है। अब उसकी पूजा कैसे करें ? कौन-सा चंदन लगावें ? कौन-सा अक्षत चढ़ावें ? कौन-सा फूल अर्पित करें ? क्या भेंट दें ?

भगवान कहते हैं, ऐसे ईश्वर की पूजा करने के लिए पुष्प, अक्षत, चंदन, नैवेद्य की जरूरत नहीं है। वही फूल के रूप में खिला है, वही गंध के रूप में फैल रहा है, वही अपना सौंदर्य बिखेर रहा है। वही चंदन की लकड़ी बना, वही घिस गया, वही सुगंध है। वही जल में रस है – **रसोऽहमप्सु कौन्तेय।** वही प्रकाश है – **प्रभास्मि शशिसूर्ययोः।** मनुष्य में कर्म करने का

जो पौरुष है, वह वही है - **पौरुषं नृषु ।** उसकी पूजा के लिए किसी पदार्थ की, द्रव्य की, दक्षिणा की आवश्यकता नहीं। उसकी अभ्यर्चा (पूजा) तो अपने कर्म से करो - **स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य ।**

अब प्रश्न यह है कि वह कौन-सा कर्म है, जिससे भगवान की पूजा होती है ? क्या स्तुति-पाठ है, घंटी बजावें ? नहीं बाबा ! जो काम तुम कर रहे हो उसीमें पूजा करो । भागवत धर्म का यही स्वरूप है कि हम जो काम कर रहे हैं उसीसे भगवान की पूजा करें । यह कैसे होगा ? यदि कोई आदमी सड़क पर झाड़ू लगा रहा है तो झाड़ू लगाने से भगवान की पूजा कैसे होगी ? कोई आदमी खेतों में फावड़ा चला रहा है तो फावड़ा चलाने से भगवान की पूजा कैसे होगी ? कोई दुकानदार दुकान में बैठकर चावल-गेहूँ-कपड़ा बेच रहा है तो उसके द्वारा भगवान की पूजा कैसे होगी ? एक सैनिक हाथ में बंदूक लेकर पहरा दे रहा है तो उसके द्वारा भगवान की पूजा कैसे होगी ? एक विद्वान शास्त्रज्ञान के द्वारा, विज्ञान के द्वारा, चिंतन के द्वारा जगत में जो हित निहित है उसका चिंतन कर रहा है तो उसके द्वारा भगवान की पूजा कैसे होगी ? कोई ब्रह्मचर्य का, कोई गृहस्थ-धर्म का, कोई वानप्रस्थ का और कोई संन्यास-धर्म का पालन कर रहा है तो भगवान की पूजा कैसे होगी ?

इसका उत्तर है कि आप जो भी कर्म कीजिये - वस्त्र बनाइये, कोयला निकालिये, किसी भी कर्तव्य-कर्म का, किसी भी धर्म का पालन कीजिये, अपने सुख-स्वार्थ के लिए मत कीजिये । उसमें से व्यक्तिगत सुख-स्वार्थ की भावना छोड़ दीजिये। ऐसा समझिये कि आपके प्रत्येक कर्म अथवा धर्म से सर्वरूप में परमेश्वर की सेवा हो रही है । यदि आपने थोड़ी-सी धरती साफ कर दी तो अनुभव कीजिये कि आपने ईश्वर का पाँव पखारा, ईश्वर का पाँव धोया क्योंकि यह भूमि भगवान का चरणारविंद है । भगवान के चरणारविंद के प्रक्षालन की सेवा हो गयी । आप अपने कर्तव्य का पालन सर्वरूप भगवान को सुख पहुँचाने के लिए, उनके अर्थ की सिद्धि के लिए कीजिये । **(क्रमशः)** ❑

बुद्धि को तैलीय बनायें

(पूज्य बापूजी की पावन अमृतवाणी)

बुद्धि तीन प्रकार की होती है । **एक होती है नौदी बुद्धि ।** घोड़े की पीठ पर पहले एक गद्दी रखी जाती है, जिस पर जीन कसी जाती है । उसे 'नौद' कहते हैं । उसमें सूआ भोंककर निकाल दो तो वह वैसे-की-वैसी रह जाती है । वैसी ही नौदी बुद्धि होती है । उसमें सत्संग का प्रवेश हुआ तो ठीक लेकिन सत्संग की जगह से गये तो वैसी-की-वैसी ! चाहे सौ-सौ जूता खायें, तमाशा घुसकर देखेंगे । यह नौदी बुद्धि होती है । कितना बोला : 'भाई ! आपस में मेलजोल से रहो, काहे को लड़ते हैं पति-पत्नी ?' फिर भी देखो तो हाल वही-का-वही ! जो नौदी बुद्धिवाले होते हैं, उन पर सत्संग का असर जल्दी नहीं होता ।

दूसरी होती है मोती बुद्धि । जैसे मोती में छेद किया तो जितना सुराख किया उतना ही रहेगा । ऐसे ही मोती बुद्धिवाले ने जितना सत्संग सुना, उतना ही उसको याद रहेगा और किसीको सुना भी देगा ।

तीसरी बुद्धि होती है तैलीय बुद्धि । जैसे तेल की एक बूँद पानी से भरी थाली में डालते हैं तो पूरी थाली में फैल जाती है, ऐसे ही तैलीय बुद्धिवाले को सद्गुरु ने कोई संकेत किया तो उसकी बुद्धि में, उसके विवेक में फैल जाता है और वह उसे अमल में लाने की कोशिश करता है । वह फिसलेगा पर फिर वापस प्रार्थना करेगा और देर-सवेर पार हो जायेगा ।

नौदी से मोती बुद्धि अच्छी है और मोती से तैलीय बुद्धि अच्छी है । नौदी बुद्धिवाले नहीं सुधरते । वे तो खुद परेशान होते हैं, अपमानित होते हैं और जिनके प्रति श्रद्धा रखते हैं उनको भी परेशान करते हैं । यदि आपकी बुद्धि नौदी बुद्धि है तो आप उसे मोती बुद्धि बनायें और मोती बुद्धि को तैलीय बुद्धि बनाकर अपना विवेक जगायें । ❑

ईश्वर का भोग और ईश्वर से योग

(आत्मनिष्ठ पूज्य बापूजी की ज्ञानमयी अमृतवाणी)

आपको ईश्वर से योग करना है कि ईश्वर का भोग करना है ? बोलो ! **वासुदेवः सर्वम्** है तो भोग किसका कर रहे हैं ? **ॐ ईशावास्यमिदं सर्वं...** सब ईश्वर है तो भोग तुम ईश्वर का करते हो कि दूसरे किसीका ? बताओ ! दिन-रात ईश्वर का ही भोग कर रहे हैं लेकिन पता नहीं है। चीज-वस्तु सब ईश्वर ही है और यहाँ (भोक्ता के रूप में) भी ईश्वर है। पति-पत्नी सब ईश्वर है। ईश्वर का भोग हो रहा है और ईश्वर से योग भी हो रहा है लेकिन भोग संयत करो तो ईश्वर के योग और भोग दोनों में पास हो जाओगे तथा भोग अधिक करोगे तो खोखले हो जाओगे।

'ईश्वर का भोग करें' तो तुम ईश्वर का भोग करनेवाले कौन ? ईश्वर से बड़े हो ? नहीं, ईश्वर के ही स्वरूप हो। तो हम अपने-आपका भोग कर रहे हैं। अपने-आपका भोग करोगे संयम से तो अपने-आपको जानोगे और अपने-आपका भोग करोगे असंयम से तो अज्ञानी, मूर्ख होकर नीच योनियों में जाओगे।

तुम ईमानदारी से सभीका मंगल चाहो, सभीका हित चाहो और फिर अपना। समाज का मंगल चाहना - यह संसार की सेवा हो गयी। ईश्वर को प्रेम करना - यह ईश्वर की सेवा हो गयी और अपने आत्मा में आकर बैठना, अपनी सेवा हो गयी। बस, तीन सेवाएँ करनी हैं और क्या है ! अपने-आपमें बैठना है तो मंत्रोच्चार करते हुए निःसंकल्प हों - **ॐ ॐ परमात्मने नमः। ॐ ॐ आनंदस्वरूपाय नमः। ॐ ॐ...** 'ॐ' माने जो सारी सृष्टियों का पालनहार, कर्ता-धर्ता है और अंतर्यामी होकर विराज रहा है।

जो ईश्वर को भोगता है वह लघु साधनों में जाता है लेकिन जो ईश्वर को भोगते हुए जानता है, 'वह ईश्वर गुरु है' - ऐसा जानकर स्वयं भी गुरु बन जाता है और लघुता से पार हो जाता है। ❑

शुभकामना संदेश

वर्तमान में जब सनातन धर्म सभी ओर से संकटों से घिरा है, ऐसे समय में भी धर्म का संरक्षण करते हुए समाज के सभी वर्गों को आध्यात्मिक व उन्नत जीवन की शिक्षा संत ही दे रहे हैं। ऐसी संतमालिका में परम श्रद्धेय संत श्री आशारामजी बापू अग्रणी हैं। उनके उपदेशों व संदेशों का प्रचार-प्रसार 'ऋषि प्रसाद' मासिक पत्रिका के माध्यम से होता रहा है। पूज्य श्री बापू का ७२वाँ अवतरण-दिवस सम्पन्न हो चुका है। इस पावन अवसर पर 'ऋषि प्रसाद' मासिक पत्रिका को इस पवित्र कार्य के लिए बधाई व उत्तरोत्तर अधिकाधिक यशस्विता के लिए शुभकामना !

- श्री मोहन भागवत

सरसंघचालक, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

भगवद्भक्त राजा पृथु

(गतांक से आगे)

राजा पृथु भगवान श्रीहरि से बोले : ''अब लक्ष्मीजी के समान मैं भी अत्यंत उत्सुकता से आप सर्वगुणधाम पुरुषोत्तम की सेवा ही करना चाहता हूँ। किंतु ऐसा न हो कि एक ही पति की सेवा प्राप्त करने की होड़ होने के कारण आपके चरणों में ही मन को एकाग्र करनेवाले हम दोनों में कलह छिड़ जाय। जगदीश्वर ! जगज्जननी लक्ष्मीजी के हृदय में मेरे प्रति विरोधभाव होने की सम्भावना तो है ही क्योंकि आपके जिस सेवाकार्य में उनका अनुराग है, उसीके लिए मैं भी लालायित हूँ। किंतु आप दीनों पर दया करते हैं, उनके तुच्छ कर्मों को भी बहुत करके मानते हैं। इसलिए मुझे आशा है कि हमारे झगड़े में भी आप मेरा पक्ष लेंगे। आप तो अपने स्वरूप में ही रमण करते हैं, आपको भला लक्ष्मीजी से भी क्या लेना है !

इसीसे निष्काम महात्मा ज्ञान हो जाने के बाद भी आपका भजन करते हैं। आपमें माया के कार्य अहंकार आदि का सर्वथा अभाव है। भगवन् ! मैं बिना किसी इच्छा के आपका भजन करता हूँ। आपने जो मुझसे कहा कि 'वर माँग' सो आपकी इस वाणी को तो मैं संसार को मोह में डालनेवाली ही मानता हूँ। यही क्या, आपकी वेदरूपा वाणी ने भी तो जगत को बाँध रखा है। यदि उस वेदवाणीरूप रस्सी से लोग बँधे न होते तो वे मोहवश सकाम कर्म क्यों करते ?

प्रभो ! आपकी माया से ही मनुष्य अपने वास्तविक स्वरूप आपसे विमुख होकर अज्ञानवश स्त्री-पुत्रादि अन्य की इच्छा करता है। फिर भी जिस प्रकार पिता पुत्र की प्रार्थना की अपेक्षा न रखकर अपने-आप ही पुत्र का कल्याण करता है, उसी प्रकार आप भी हमारी इच्छा की अपेक्षा न करके हमारे हित के लिए स्वयं ही प्रयत्न करें।''

आदिराज पृथु के इस प्रकार स्तुति करने पर सर्वसाक्षी श्रीहरि ने उनसे कहा : ''राजन् ! तुम्हारी मुझमें भक्ति हो। बड़े सौभाग्य की बात है कि तुम्हारा चित्त इस प्रकार मुझमें लगा हुआ है। ऐसा होने पर तो पुरुष सहज में ही मेरी उस माया को पार कर लेता है जिसको छोड़ना या जिसके बंधन से छूटना अत्यंत कठिन है। अब तुम सावधानी से मेरी आज्ञा का पालन करते रहो। प्रजापालक नरेश ! जो पुरुष मेरी आज्ञा का पालन करता है, उसका सर्वत्र मंगल होता है।''

इस प्रकार भगवान ने राजर्षि पृथु के सारगर्भित वचनों का आदर किया। फिर पृथु ने उनकी पूजा की और प्रभु उन पर सब प्रकार कृपा कर वहाँ से चलने को तैयार हुए। तदनंतर अपना स्वरूप दिखाकर अंतर्धान हुए अव्यक्तस्वरूप देवाधिदेव भगवान को नमस्कार करके राजा पृथु भी अपनी राजधानी में चले आये।

महाराज पृथु का अपनी प्रजा को उपदेश

राजा पृथु गंगा और यमुना के मध्यवर्ती देश में निवास कर अपने पुण्यकर्मों के क्षय की इच्छा से प्रारब्धवश प्राप्त हुए भोगों को ही भोगते थे। एक बार उन्होंने एक महासत्र की दीक्षा ली। उस समय वहाँ देवताओं, ब्रह्मर्षियों और राजर्षियों का बहुत बड़ा समाज एकत्र हुआ। उसमें महाराज पृथु ने सबके सम्मुख प्रजा को उपदेश देते हुए कहा : ''सज्जनो ! आपका कल्याण हो। आप महानुभाव जो यहाँ पधारे हैं, मेरी प्रार्थना सुनें - जिज्ञासु पुरुषों को चाहिए कि संत-समाज में (शेष पृष्ठ १५ पर)

हरि ब्यापक सर्बत्र समाना...

(पूज्य बापूजी की ज्ञानमयी अमृतवाणी)

गुजरात में नारायण प्रसाद नाम के एक वकील रहते थे। वकील होने के बावजूद भी उन्हें भगवान की भक्ति अच्छी लगती थी। नदी में स्नान करके गायत्री मंत्र का जप करते, फिर कोर्ट-कचहरी का काम करते। कोर्ट-कचहरी में जाकर खड़े हो जाते तो कैसा भी केस हो, निर्दोष व्यक्ति को तो हँसते-हँसते छुड़ा देते थे, उनकी बुद्धि ऐसी विलक्षण थी।

एक बार एक आदमी को किसीने झूठे आरोप में फँसा दिया था। निचली कोर्ट ने उसको मृत्युदंड की सजा सुना दी। अब वह केस नारायण प्रसाद के पास आया।

ये भाई तो नदी पर स्नान करने गये और स्नान कर वहीं गायत्री मंत्र का जप करने बैठ गये। जप करते-करते ध्यानस्थ हो गये। ध्यान ऐसा लगा कि शाम के पाँच बज गये। ध्यान से उठे तो सोचा कि 'आज तो महत्त्वपूर्ण केस था। मृत्युदंड मिले हुए अपराधी का आज आखिरी फैसले का दिन था। पैरवी करके आखिरी फैसला करना था। यह क्या हो गया !'

जल्दी-जल्दी घर पहुँचे। देखा तो उनके मुवक्किल के परिवारवाले भी बधाई दे रहे हैं, दूसरे वकील भी बधाई देने आये हैं। उनका अपना सहायक वकील और मुंशी सब धन्यवाद देने आये हैं। बोलने लगे : ''नारायण प्रसादजी ! आपने तो गजब कर दिया ! उस मृत्युदंडवाले को आपने हँसते-खेलते ऐसे छुड़ा लिया कि हम कल्पना भी नहीं कर सकते थे। हम आपको बधाई देते हैं।''

नारायण प्रसाद ने गम्भीरता से उनका धन्यवाद स्वीकार लिया। उनको तो पता था कि 'मैं कोर्ट में गया ही नहीं हूँ।'

संध्या करके जो कुछ जलपान करना था किया, थोड़ा टहलकर फिर शयनखंड में गये। सोचते रहे कि 'भगवान ने मेरा रूप कैसे बना लिया होगा ?' इसके विषय में सूक्ष्म चिंतन किया। विचार करते-करते नारायण प्रसाद को हुआ कि 'मुझे आज केस के लिए कोर्ट में जाना था, मुझे पता था और मुझे पता रहे उसके पहले मेरे अंतर्यामी जानते थे। मन में जो भाव आते हैं, उन सारे भावों को समझनेवाले **भावग्राही जनार्दनः** हैं। जहाँ से भाव उठता है वहाँ तो वे ठाकुरजी बैठे हैं। 'थोड़ा ध्यान करके जाऊँगा', यह मेरा संकल्प मेरे अंतर्यामी ने जान लिया। वह मेरा अंतरात्मा ही नारायण प्रसाद वकील बन के, केस जिताकर मुझे यश देता है। यह प्रभु की क्या लीला है ! यह सब क्या व्यवस्था है !' - यह विचार करते-करते सो गये।

थोड़ी नींद ली, इतने में उनके कानों में 'नारायण... नारायण... नारायण...' की आवाज सुनायी दी और वे अचानक उठकर बैठ गये। उन्हें लगा कि 'यह आवाज तो मेरे घर के प्रवेशद्वार से अंदर आ रही है।' कौन होंगे ?

दरवाजा खोला तो देखा कि एक लँगोटधारी महापुरुष खड़े हैं। वे आदेश के स्वर में बोले : ''अरे नारायण ! कब तक सोता रहेगा, खड़ा हो जा।'' वे उन महापुरुष के नजदीक आकर खड़े हो गये। वे घर से बाहर निकले। नारायण प्रसाद उनके पीछे-पीछे चलने लगे। कुछ दूर जाने पर बोले : ''अरे, जेब में क्या रखा है ? लोहे का टुकड़ा जेब में रखा है क्या ?''

देखा कि जेब में तिजोरी की चाबियाँ हैं। उन्होंने चाबियाँ वहीं रास्ते में फेंक दीं। आगे बाबा

और पीछे नारायण प्रसाद। जाते-जाते एकांत में नारायण प्रसाद को बाबाजी ने ज्ञान दिया कि 'वे परमात्मा विभु-व्याप्त हैं। वे यदि अंतरात्मा रूप में नहीं मिले तो बाहर नहीं मिलते हैं। यह उन्हीं आत्मदेव की लीला है। वे ही आत्मदेव तुम्हारा रूप बनाकर केस जीतकर आये हैं। उन परमेश्वर को पा लो, बाकी सब व्यर्थ में झंझट है।'

लँगोटधारी बाबा थे नित्यानंद महाराज। एक तो वज्रेश्वरी के मुक्तानंदजी के गुरु नित्यानंदजी हो गये, ये दूसरे थे। इंदौर से करीब ७० किलोमीटर दूर धार में इनका आश्रम है, मैं देखकर आया हूँ।

नित्यानंदजी बड़े बापजी के नाम से प्रसिद्ध थे। नित्यानंद बाबा नारायण प्रसाद को इतना स्नेह करने लगे कि लोग नारायण प्रसाद को छोटे बापजी बोलने लगे।

छोटे बापजी मानते थे कि 'वास्तव में तत्त्वरूप से गुरु का आत्मा नित्य, व्यापक, विभु, चैतन्य है और मैं भी वही हूँ।' बड़े बापजी भी मानते थे कि 'नारायण प्रसाद का शरीर और मेरा शरीर भिन्न दिखता है लेकिन चिदानंद आकाश दोनों में एकस्वरूप है।'

एक बार उत्तराखंड से कुछ संत नित्यानंद महाराज के दर्शन-सत्संग के लिए धार शहर में स्थित आश्रम में आये थे। नारायण प्रसाद आश्रम की सारी व्यवस्था सँभालते थे। उन्हें लगा कि बड़े बापजी सबसे ज्यादा महत्त्व नारायण प्रसाद को देते हैं। विदाई के समय नित्यानंद बाबा ने कहा : ''चलो, संत लोग आज विदाई ले रहे हैं तो हम आपके साथ बैठकर फोटो निकलवायेंगे।'' आग्रह किया तो सब संत राजी हो गये।

फोटोग्राफर ने फोटो लिये। जब फोटो खींचे गये उसमें नारायण प्रसाद को शामिल नहीं किया गया। लेकिन जब फोटो का प्रिंट आया तो नारायण प्रसाद का फोटो बाबा के हृदय में दिखायी दे रहा था! फोटोग्राफर दंग रह गया कि 'यह कैसे! किसीके हृदय में किसीका फोटो आ जाय!'

बोले : ''बाबा! यह क्या है?''

बड़े बापजी बोले : ''मैं क्या करूँ? इसको कितना दूर रखूँ, यह तो मेरे हृदय में समा के बैठ गया है।'' तो मन में जिसकी तीव्र भावना होती है, वह हृदय में भी दिखायी देता है। नारायण प्रसाद की तीव्र प्रीति, भावना थी तो फोटो में बाबाजी के हृदय में नारायण प्रसाद आ गये।

हमारे कई साधकों के हृदय में ॐकार मंत्र की, हरि ॐ मंत्र की महत्ता है तो बैंगन काटते हैं तो ॐकार दिखता है, रोटी बनाते हैं तो उस पर ॐकार उभरता है। आपकी भगवान के प्रति जैसी तीव्र भावना होती है वैसा उसका सीधा असर पड़ता है और दिखायी भी देता है।

नित्यानंद बाबा नारायण प्रसाद से बोलते थे कि 'नारायण भी तत्त्वरूप से आत्मदेव हैं' तो उनके हृदय में आकृतिवाले नारायण प्रसाद दिखायी दिये।

बाबा के जीवन में बहुत सारी आध्यात्मिक चमत्कारिक घटनाएँ घटीं लेकिन बड़े-में-बड़ा चमत्कार यह है कि बाबा इन सब चमत्कारों को ऐहिक मानते थे और सारे चमत्कार जिस सत्ता से होते हैं, उस आत्मा-परमात्मा को 'मैं' रूप में जानते थे।

तो **ध्यान-भजन करने से आपका पेशा बिगड़ता नहीं बल्कि आपकी बुद्धि में भगवान की विलक्षण लक्षणवाली शक्ति आती है।** आप लोग भी इन महापुरुषों की जीवनलीलाओं से, घटनाओं से अपने जीवन में यह दृढ़ करो कि -

हरि ब्यापक सर्बत्र समाना।
प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना॥

(श्री रामचरित. बा.कां. : १८४.३)

भगवान व्यापक हैं उनके लिए जिनके हृदय में प्रीति होती है, उनके हृदय में वे प्रकट होते हैं। □

परम उन्नतिकारक

श्रीकृष्ण-उद्धव प्रश्नोत्तरी

(पूज्य बापूजी की ज्ञानमयी अमृतवाणी)

(गतांक से आगे)

उद्धवजी ने भगवान श्रीकृष्ण से कहा : ''हे मधुसूदन ! आपकी ज्ञानमयी वाणी सुनकर जीव के जन्म-जन्म के पाप मिट जाते हैं । आपकी करुणा-कृपा द्वारा जीव अज्ञान-दशा से जागकर आपके ज्ञान से एकाकार होता है । हे परमेश्वर ! मुझे यह बताइये, 'ऋत' किसे कहते हैं ?''

श्रीकृष्ण बोले : ''एक तो सत्य बोले । जो समझा, जो जाना, उसके अंदर कुछ कपट न मिलाये, जैसे-का-तैसा बोले लेकिन वे सत्य वचन किसीको चुभनेवाले न हों, प्रिय हों । वाणी तू-तड़ाके की न हो, मधुर हो, इसे 'ऋत' बोलते हैं ।''

सत्य, प्रिय, मधुर - ये तीनों मिलाकर 'ऋत' होता है । सत्य बोलो, मधुर बोलो और हितकारी बोलो । कटु न बोलो, असत्य न बोलो लेकिन माँ और गुरु के लिए यह कानून नहीं लगता । माँ बेटे को बोलती है : 'देख बेटा ! दवा पी ले, अच्छी है, मीठी-मीठी है ।' होती कड़वी है लेकिन झूठ बोली माँ : 'मीठी है ।'

'ऐ महाराज ! ओ पुलिसवाले ! इसको पकड़ के ले जाओ, दवा नहीं पीता । दवा नहीं पियेगा तो तेरी ये आँखें निकालकर कौवों को दे दूँगी और यह नाक काटकर कुतिया बेचारी भूखी है उसीको दे दूँगी ।' अब कैसा-कैसा बोलती है - कटु, अप्रिय, झूठ लेकिन बच्चे के हित के लिए बोलती है तो उसको पाप नहीं लगता । असत्य न बोलें, कटु न बोलें लेकिन किसीके हित के लिए बोलना पड़ता है तो उसका दोष नहीं लगता ।

उद्धवजी कहते हैं : ''हे गोविंद ! हे गोपाल ! हे अच्युत ! पवित्रता क्या है ?''

श्रीकृष्ण बोले : ''किसी भी कर्म का अपने में आरोप न करना । 'मैंने पुण्य किया है, मैंने पाप किया है, मैंने बिच्छू मारा है, मैंने साँप मारा है, मैंने प्याऊ लगाया है, मैंने दान किया है...' - किसी भी प्रकार का अभिमान न करना । किसी भी कर्म का अभिमान अपने में थोपना नहीं - यह अपने चित्त को निर्मल बनाने के लिए 'पवित्रता' कही जाती है ।''

उद्धवजी ने कहा : ''परमेश्वर ! आपकी मधुमय वाणी सुनने से मेरी शंकाएँ निवृत्त होती हैं और आप सूझबूझ के धनी हैं । हे भगवान ! संन्यास किसको कहते हैं ?''

श्रीकृष्ण कहते हैं : ''अनात्म वस्तुओं का त्याग ही संन्यास है । जिसने इच्छाओं, वासनाओं, अनात्म शरीर और वस्तुओं को 'मैं-मेरा' मानना छोड़ दिया है वह संन्यासी है ।''

गीता (६.१) में भी भगवान ने कहा है :

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः ।
स संन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः ॥

किसी कर्म के फल का आश्रय न लेकर दूसरों की भलाई के भाव से कर्म करे । भगवान की प्रीति के भाव से कर्म करनेवाला संन्यासी हो जायेगा ।

'मैं अब साधु हो गया हूँ, अग्नि को नहीं छुऊँगा । अब मैं काम-धंधा नहीं करता हूँ, कोई क्रिया नहीं करूँगा ।' - इसको संन्यासी नहीं बोलते हैं । अनात्म शरीर, अनात्म वस्तुओं व अनात्म संसार की आसक्ति को जिसने त्याग दिया है वह संन्यासी है ।

उद्धवजी ने कहा : ''प्रभु ! आपकी अमृतभरी वाणी सुनकर मेरी तो शंकाएँ निवृत्त हो ही रही हैं,

साथ ही जगत के लोगों को भी इस ज्ञान से बहुत लाभ होगा। हे परमेश्वर ! असली धन क्या है ?''

श्रीकृष्ण कहते हैं : ''जो इहलोक और परलोक में हमारे साथ चले, हमारी रक्षा करे वह धर्म ही असली धन है।'' धर्म ही सच्चा धन है। नकली धन तो नकली शरीर के लिए चाहिए लेकिन असली धन जीवात्मा के लिए चाहिए। धन तो तिजोरी में, बैंक में रहता है। मृत्यु आ गयी तो धन साथ में नहीं चलता।

साथी हैं मित्र हैं, गंगा के जलबिंदु पान तक।
अर्धांगिनी बढ़ेगी तो केवल मकान तक।
परिवार के सब लोग चलेंगे श्मशान तक।
बेटा भी हक निभा देगा अग्निदान तक।
केवल धर्म ही साथ निभायेगा दोनों जहान तक॥

केवल धर्म ही यहाँ और परलोक तक साथ चलता है। जो साथ नहीं छोड़ता वह धर्म है। किसीको न सताने का व्रत लेना धर्म है। धर्म के दस दिव्य लक्षण हैं। अपने जीवन में कैसी भी परिस्थिति आये तो भी धैर्य न छोड़ें। क्षमा का सद्गुण - यह धर्म का दूसरा लक्षण है। इन्द्रियाँ और मन इधर-उधर भागें तो दम मारकर उनको सही रास्ते लगाना, यह तीसरा लक्षण है। अस्तेय (चोरी न करना) धर्म का चौथा लक्षण है। भीतर भी पवित्र भाव और बाहर भी पवित्र खानपान, यह धर्म का पाँचवाँ लक्षण है। छठा है इन्द्रियों को संयत करना और सातवाँ लक्षण है कि बुद्धि ज्ञानमय हो, भगवन्मय, सात्त्विक हो। आठवाँ है विद्या, वेदशास्त्रों की विद्या। नौवाँ है सत्य बोलना और दसवाँ है अक्रोध। धर्म के ये दस लक्षण हैं।

उद्धवजी ने पूछा : ''प्रभु ! आपकी दृष्टि में यज्ञ किसको बोलते हैं ?''

भगवान ने हँसते हुए कहा : ''उद्धव ! सभी यज्ञों में उत्तम, श्रेष्ठ यज्ञ है मेरे साथ प्रीति करना, मेरा ज्ञान पाना, मेरा सत्संग सुनना।''

'गीता' में भगवान ने कहा है : **यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि**। 'यज्ञों में जपयज्ञ तो मेरा ही स्वरूप है।' सारे यज्ञों से उत्तम यज्ञ यही है कि व्यक्ति को भगवान के नाम की दीक्षा मिल जाय और मंत्र का अर्थ समझकर वह जप करे। जिसने गुरुदीक्षा ली है और जप करता है तो तीर्थ बोलते हैं : 'हम किसको पवित्र करें ? जपयज्ञ करनेवाला गुरुदीक्षा से सम्पन्न साधक तो हमको ही पवित्र करनेवाला है।' मंदिर कहते हैं : 'यह तो चलता-फिरता मंदिर है क्योंकि इसके हृदय में भगवान के नाम का जप भी है, भगवान की प्रीति भी है और गुरु का दिया हुआ मंत्र भी है।' मंदिर के देवता भी बोलते हैं कि 'यह तो स्वयं चलता-फिरता मंदिर है।' (क्रमशः) ❒

(पृष्ठ ११ से 'भगवद्भक्त राजा पृथु' का शेष)

अपने निश्चय का निवेदन करें। इस लोक में मुझे प्रजाजनों का शासन, उनकी रक्षा, उनकी आजीविका का प्रबंध तथा उन्हें अलग-अलग अपनी मर्यादा में रखने के लिए राजा बनाया गया है। अतः इनका यथावत् पालन करने से मुझे उन्हीं मनोरथ पूर्ण करनेवाले लोकों की प्राप्ति होनी चाहिए जो वेदवादी मुनियों के मतानुसार सम्पूर्ण कर्मों के साक्षी श्रीहरि के प्रसन्न होने पर मिलते हैं। **जो राजा प्रजा को धर्ममार्ग की शिक्षा न देकर केवल उससे कर वसूल करने में लगा रहता है, वह केवल प्रजा के पाप का भागी होता है और ऐश्वर्य से हाथ धो बैठता है।** अतः प्रिय प्रजाजन ! अपने इस राजा का परलोक में हित करने के लिए आप लोग परस्पर दोषदृष्टि छोड़कर हृदय से भगवान को याद रखते हुए अपने-अपने कर्तव्य का पालन करते रहिये क्योंकि आपका स्वार्थ भी इसीमें है और इस प्रकार आपका मुझ पर बड़ा अनुग्रह होगा। विशुद्धचित्त देवता, पितर और महर्षिगण ! आप भी मेरी इस प्रार्थना का अनुमोदन कीजिये क्योंकि **कोई भी कर्म हो, मरने के बाद उसके कर्ता, उपदेष्टा और समर्थक को उसका समान फल मिलता है।''** (क्रमशः) ❒

भगवदीय अपराध की सजा

(पूज्य बापूजी की शिक्षाप्रद अमृतवाणी)

जब तक भगवान में प्रीति नहीं होती, तब तक भगवद्रस का आस्वादन नहीं होता और विकार पीछा नहीं छोड़ते ।

अकबर की बहुत सारी बेगमें थीं । उनमें हिन्दुआनी बेगमें भी थीं । उनमें एक का नाम था जोधाबाई । एक दिन वह सुबह-सुबह यमुनाजी में स्नान करने गयी तो वहाँ देखा कि एक बच्ची बेचारी पानी में डूब-सी रही है । उसे उठाने का उसका मन हुआ । उसने बच्ची को उठा लिया और अपने साथ ले आयी तथा उसका अपनी जाई की नाईं पालन-पोषण करने लगी ।

लड़की जब ११-१२ साल की हुई तो एक दिन वह संदूक खोलकर कपड़े निकाल रही थी । जोधाबाई छुपकर देख रही थी कि यह क्या करती है ? उसने एक साड़ी निकाली और पहन ली । जो दुल्हन का शृंगार होता है, उसने वह सारा किया और चुपके-से छत पर खड़ी हो गयी ।

जब ग्वाले गाय चराकर लौटते हैं, वह समय था । एक दिन-दो दिन... जोधाबाई ने जब देखा कि यह रोज सज-धजकर ऊपर खड़ी हो जाती है तो एक दिन उसने कन्या से पूछा : ''बेटी ! तू यह क्या करती है ?''

पहले तो वह शरमा गयी, बताने से कतराने लगी । फिर जोधाबाई ने जब आग्रह किया तब उसने कहा : ''मेरा पति गाय चराकर लौटता है ।''

जोधाबाई : ''कौन है तेरा पति ?''

''वह बंसीधर, घुँघराले बालोंवाला यशोदा का लाल ।''

जोधाबाई को लगा कि 'यह पिछले जन्म में कोई भक्तानी रही होगी, जो भगवान को पतिरूप में मानती होगी । किसी कारण साधना में रुकावट आयी होगी और मर गयी होगी ।'

अकबर ने उसका रूप-सौंदर्य देख उस अपनी धर्म की कन्या के साथ विवाह करना चाहा । ज्यों ही उसे उसके साथ विवाह करने का अथवा ऐसे ही उसके साथ विकारी भोग भोगने का विचार आया, त्यों ही उसके शरीर में जलन पैदा हो गयी । ऐसी जलन, ऐसी अशांति कि कई हकीमों के उपचार करने पर भी उसे आराम नहीं हुआ ।

आखिर बीरबल से पूछा : ''बीरबल ! क्या बात है कि मेरा रोग मिटता ही नहीं ?''

बीरबल तो जानता था उसकी आदत । उसे तो पता था कि धर्म की कन्या के प्रति बुरा विचार किया है ।

बीरबल ने कहा : ''आप संत सूरदासजी महाराज की शरण लो । वे आयें और उनके हृदय में जब भगवान के प्रति प्रार्थना अथवा संकल्प उठेगा तभी यह ठीक हो सकता है ।''

यह भगवदीय अपराध है, भगवान की भक्तानी के प्रति... । उसको बोला नहीं लेकिन बीरबल ने गणित लगाया कि यह भगवदीय अपराध है तो भगवद्-जन ही उस भगवदीय अपराध की क्षमा दिला सकते हैं । बड़ी अनुनय-विनय करके अकबर ने सूरदासजी को बुलाया और उनके हृदय में उसके प्रति सद्भाव अथवा दया उपजे ऐसा व्यवहार किया तो सूरदासजी ने कृपा करके उसे रोग से, अशांति से बचा लिया ।

सुख के लिए आदमी न करने जैसा काम भी करता है, फिर भी सुख टिकता नहीं है क्योंकि वह दुःखालय संसार से सुख लेता है । हम सुख को थामने के लिए और दुःख को भगाने के लिए दिन-रात लगे रहते हैं फिर भी सुख थमता नहीं, दुःख भागता नहीं । दुःखी आदमी का दुःख तब

तक जीवित रहता है जब तक उसकी संसार से सुख लेने की भूल जीवित है।

अब आपको क्या करना है ? अकबर जैसा राजवैभव मिल जाय फिर भी विकारी सुख भोगने की गंदी आदत जीव की जाती नहीं। इसलिए अपनी पत्नी हो तो भी विषय-विकारों से बचें। भगवत्सुमिरन, भगवद्ध्यान, भगवद्विश्रांति में पूर्णता पानी चाहिए। भगवत्सुख कई वर्षों के बाद मिलेगा ऐसा नहीं है। ऐसा सोचो कि 'भगवान अभी मेरे हैं, चैतन्य हैं, सुखस्वरूप हैं। वे सच्चिदानंद हैं। मुझसे दूर नहीं हैं।'

भगवान को कई लोगों ने कठिन कर दिया कि 'वे वैकुंठ में हैं। इतने साल जप करेंगे, इतनी तपस्या करेंगे तब वे मिलेंगे।' वास्तव में अकुंठित हृदय ही वैकुंठ है, विश्वेश्वर की प्रीतिवाला हृदय ही वैकुंठ है।

अरे, अभी नहीं हैं बाद में मिलेंगे तो चले भी जायेंगे। वे अभी मौजूद हैं। 'अभी सत्स्वरूप हैं, चेतनस्वरूप हैं, आनंदस्वरूप हैं और अभी मेरे आत्मा हैं' - इसका अनुभव करने के लिए थोड़ी भूख जगायें, बस। 'मुझे अपने आत्मा-परमात्मा का अनुभव करना है...' आपमें यह भूख जग गयी तो भगवान आपके अंदर से आनंदस्वरूप में प्रकटेंगे। सत्स्वभाव में, ज्ञानस्वभाव में आपके हैं, ऐसा महसूस करायेंगे।

यह बात दिमाग से बिल्कुल निकाल दो कि हम इतनी तपस्या करेंगे फिर भगवान मिलेंगे। नहीं, भगवान बिछुड़ ही नहीं सकते। भगवान की आकृति आती है-जाती है लेकिन उनका जो चिद्घन अस्तित्व है, वह सर्वत्र व्यापक है। हवा के कारण पानी में तरंगें आयीं, बुलबुले आये, झाग आया और ये सब मिट भी गये, बाकी पानी तो अभी भी है सरोवर में। ऐसे ही चिंतन करें कि 'सत्-चित्-आनंदस्वरूप परमात्मा अभी हैं। वे मेरे को छोड़ नहीं सकते, मैं उनको नहीं छोड़ सकता। परमात्मा मुझे अपने से अलग नहीं कर सकते। मैं उनका हूँ, वे मेरे हैं। ॐ... ॐ... ॐ...' ❑

चिंतन पराग

(पूज्य बापूजी की पावन अमृतवाणी)

✻ वैभव का भूषण सुजनता है। शौर्य-पराक्रम की शोभा है वाणी का संयम अर्थात् अपने मुख से शौर्य-पराक्रम का वर्णन न करना। ज्ञान का भूषण शांति है। नम्रता शास्त्र के श्रवण को शोभा देती है। सत्पात्र को दान देना दान की शोभा है। क्रोध न करना तप की शोभा है। क्षमा करना समर्थ पुरुष की शोभा है। निष्कपटता धर्म को शोभा देती है।

✻ ऐ मानव ! तुझमें अपूर्व शक्ति, सौंदर्य, प्रेम, आनंद, साहस छुपा है। घृणा, उद्वेग, ईर्ष्या, द्वेष और तुच्छ वासनाओं से तेरी महत्ता का ह्रास होता जा रहा है। सावधान हो भैया ! कमर कस... अपनी संकीर्णता और अहंकार को मिटाता जा। अपने दैवी स्वभाव, शक्ति, उल्लास, आनंद, प्रेम और चित्त के प्रसाद को पाता जा।

✻ यह पक्की गाँठ बाँध लो कि जो कुछ हो रहा है, चाहे अभी तुम्हारी समझ में न आये और बुद्धि स्वीकार न करे तो भी वह परमात्मा का मंगलमय विधान है। वह तुम्हारे मंगल के लिए ही सब करता है। परम मंगल करनेवाले परमात्मा को बार-बार धन्यवाद देते जाओ, प्यार करते जाओ और अपनी जीवन-नैया जीवनदाता की ओर बढ़ाते जाओ।

✻ ऐसा कोई व्यक्ति, वस्तु या परिस्थिति नहीं जो तुम्हारी आत्मशक्ति के अनुसार बदलने में राजी न हो। अपने भीतर का यह आत्मबल, यह संकल्पबल विकसित करने की युक्ति किन्हीं सच्चे महापुरुष से सीखने को मिल जाय और उसका विधिवत् अनुष्ठान करे तो नर अपने नारायण स्वभाव में इसी जन्म में जाग सकता है।

(आश्रम से प्रकाशित 'जीवन विकास' पुस्तक से) ❑

उन्नति के सूत्र

(पूज्य बापूजी की परम हितकारी वाणी)

संसाररूपी युद्ध के मैदान में परमात्मा को किस तरह पाया जा सकता है - यह ज्ञान यदि पाना हो तो इसके लिए 'श्रीमद् भगवद्गीता' है। मृत्यु को किस तरह सुधारा जा सकता है - यह ज्ञान यदि पाना हो तो 'श्रीमद् भागवत' है।

साधक को अपनी दिनचर्या का विश्लेषण करना चाहिए। महीने भर अथवा साल भर की योजना न बनायें वरन् रोज सुबह योजना बनायें कि 'आज चाहे कुछ भी हो जाय, बेहोशी में नहीं जिऊँगा, होश में ही जिऊँगा, सजग रहूँगा। जो कुछ भी करूँगा, खाऊँगा, पिऊँगा, लूँगा-दूँगा, उसका परिणाम क्या होगा - इसका पहले विचार करूँगा। मेरी सारी क्रियाएँ, सारी चेष्टाएँ ईश्वर की ओर ले जानेवाली हैं या ईश्वर से विमुख करनेवाली हैं ? ऐसा पहले चिंतन करूँगा।' इस प्रकार विचार करके कर्म करते रहने से साधक को ईश्वराभिमुख होने में सहायता मिलती है।

यदि अपने चिंतन का, अपनी बुद्धि का सदुपयोग करने की कला आ जाय तो मनुष्य संसार में खूब आनंद से, खूब शांति से एवं खूब प्रेम से जी सकता है। स्वर्ग के सुख से भी वह कई गुना ज्यादा सुख पा सकता है। मृत्यु के पहले और बाद भी वह मुक्ति का अनुभव कर सकता है।

'भगवद्गीता' के सोलहवें अध्याय का उद्देश्य ही यह है कि मनुष्य अपने आत्मदेव के ज्ञान को पाकर मुक्त हो जाय। आसुरी वृत्तियों से किस प्रकार बचा जाय, सांसारिक बंधनों से किस प्रकार छूटा जाय और मुक्ति सरलता से मुट्ठी में कैसे आये ? इसके लिए 'गीता' का सोलहवाँ अध्याय दैवी सम्पत्ति का अर्जन करने के लिए कहता है। दैवी सम्पत्ति में निर्भयता, मौन, तप, आहार-संयम आदि गुण हैं।

जीवन में उन्नति के चार सूत्र हैं। **पहली बात है कि निर्भय रहो।** 'शादी-विवाह में इतना खर्च नहीं करूँगा तो बेइज्जती होगी... उधार लेकर भी फर्नीचर नहीं खरीदूँगा तो लोग क्या कहेंगे...' - इस प्रकार के कई भय मनुष्य को सताते रहते हैं। जिस काम से तुम्हारा चित्त भयभीत होता हो एवं दूसरों की खुशामद करने में लगता हो, उसे छोड़ दो। तुम तो केवल अपने अंतर्यामी परमात्मा को राजी करने का प्रयत्न करो। पफ-पाउडर, लाली-लिपस्टिक आदि से शरीर को नहीं सजायेंगे तो लोग क्या कहेंगे इसकी परवाह न करो। जीवन में निर्भयता लाओ। शराबी कहता है कि 'चलो मित्र ! शराब पियें।' अब यदि तुम शराब नहीं पीते हो तो मित्र नाराज हो जाते हैं और यदि पीते हो तो तुम्हारी बरबादी होती है। फिर क्या करें ? अरे, मित्र नाराज होते हैं तो होने दो परंतु शराब नहीं पीनी है यह निश्चय दृढ़ रखो। जो लोग तुम्हें खराब काम, हलकी संगति और हलकी प्रवृत्तियों की तरफ घसीटते हैं उनसे निर्भय हो जाओ लेकिन माता-पिता, गुरु, शास्त्र एवं भगवान क्या कहेंगे, इस बात का डर रखो। ऐसा डर रखने से चित्त पवित्र होने लगता है क्योंकि ऐसा डर हलके कामों, हलकी प्रवृत्तियों एवं हलकी संगति से बचानेवाला होता है।

हरि डर गुरु डर जगत डर, डर करनी में सार।
रज्जब डरिया सो उबरिया, गाफिल खायी मार॥

जीवन में निर्भयता आनी ही चाहिए। झूठे आडम्बरों से बचने के लिए भी निर्भय बनो। आप मेहमानों को भिन्न-भिन्न प्रकार के अच्छे-अच्छे एवं तले हुए व्यंजन न खिला सको तो कोई बात नहीं, चिंता मत करो। परंतु यदि तुम सच्चे दिल से, एक प्रेमभरी नजर से, पानी के एक प्याले से

भी मेहमान का आदर-सत्कार कर सको तो वह तुम्हारे यहाँ से उन्नत होकर जायेगा ।

तुम लोगों की परवाह मत करो कि 'ऐसा नहीं करेंगे तो लोग क्या कहेंगे...' अरे ! तुम अपनी नाक से श्वास लेते हो कि लोगों की नाक से ? अपने जीवन का आयुष्य खर्चते हो कि लोगों के जीवन का ? हम एक-दूसरे से ऐसे बँध गये हैं, ऐसे बँध गये हैं कि शराब-कबाब आदि की पार्टियों से भले अपना व दूसरों का सत्यानाश होता हो फिर भी 'लोग क्या कहेंगे ?' के भूत से ग्रस्त हो जाते हैं एवं अपनी हानि करते रहते हैं । इसीलिए 'गीता' में कहा गया है : **अभयं सत्त्वसंशुद्धिः ।** निर्भय एवं सत्त्वगुणी बनो । कायर, डरपोक एवं रजो-तमोगुणी मत बनो ।

मैं घूमने जाता हूँ तो कभी कुत्ते भौंकने लगते हैं । मेरा तो विनोदी स्वभाव है । कुत्ते भौंकते हैं तब यदि मैं खड़ा रह जाता हूँ तो उनकी पूँछ दबी हुई पाता हूँ लेकिन जानबूझकर विनोद में दौड़ने लगता हूँ तो कुत्ते तो मेरा पीछा करते ही हैं, साथ में उनके छोटे-छोटे पिल्ले भी मेरा पीछा करने लग जाते हैं ।

दुःख एवं मुसीबतें डरपोक मनुष्य का ही पीछा करती हैं, जबकि निर्भय व्यक्ति के सामने उनकी पूँछ दब जाती है । अतः दुःख एवं मुसीबतों को बुलाना हो तो भयभीत रहो और उनकी पूँछ दबानी हो तो निर्भय बनो ।

भगवान से, गुरु से, माता-पिता से, शास्त्र से भले अनुशासित रहो परंतु जो हलका संग कराके पतन करा दें, उनसे निर्भय रहना चाहिए । उनसे किनारा करके निर्भयतापूर्वक अपने जीवन में अच्छे संस्कारों को पकड़े रहना चाहिए ।

दूसरी बात है कि हृदय शुद्ध रहे ऐसा आहार-विहार और चिंतन करो । कहा भी गया है कि 'जैसा खाओ अन्न, वैसा बनता मन ।' साधक को अपने आहार पर खूब ध्यान देना चाहिए । 'आहार' शब्द केवल भोजन के लिए ही नहीं है वरन् आँखों से, कानों से, नाक से, त्वचा से जो ग्रहण किया जाता है, वह भी आहार के ही अंतर्गत आता है। अतः उसमें सात्त्विकता का ध्यान रखना चाहिए ।

तीसरी बात है तप । हमारे जीवन में तपस्या भी होनी चाहिए । सुबह भले ठंड लगे फिर भी सूर्योदय से पूर्व उठकर स्नान कर लो । देखो, इससे हृदय में कितनी प्रसन्नता और सत्त्वगुण बढ़ता है ! फिर थोड़ा ध्यान करो । यह तप हो जाता है । सत्संग अथवा सत्कर्म के समय थोड़ा तन-मन-धन तो अवश्य खर्च होता है किंतु वह तुम्हारी तपस्या बन जाती है ।

चौथी बात है मौन । प्रतिदिन २-४ घंटे का मौन रखो । इससे तुम्हारी आंतरिक शक्ति बढ़ेगी, तुम्हारी वाणी में आकर्षण आयेगा । जो पतंगे की तरह इधर-उधर भटकते रहते हैं एवं व्यर्थ की बक-बक करते रहते हैं उनके चित्त में न शांति होती है, न क्षमा, न विचारशक्ति होती है और न ही अनुमान शक्ति । वे बिखर जाते हैं । स्त्रियों को तो मानो ज्यादा बोलने का ठेका ही मिला हुआ है । सास-बहू में, अड़ोस-पड़ोस में व्यर्थ की गप्पें मारकर वे स्वयं ही झगड़े पैदा कर लेती हैं । यदि झगड़े न भी होते हों तो फालतू बातें तो होती ही हैं । उन बेचारियों को पता ही नहीं होता कि व्यर्थ की बातें करने से प्राणशक्ति एवं वाक्शक्ति का ह्रास होता है ।

अतः साधक को चाहिए कि वह मौन रखे । मौन से बहुत लाभ होता है । यदि एक बार भी तुम लम्बे समय तक मौन रखो तो अंदर का आनंद प्रकट होने लगेगा । विचारशक्ति, अनुमान शक्ति के अलावा धैर्य, क्षमा, शांति आदि सद्गुण भी आने लगेंगे ।

गुजराती में कहावत है : **न बोल्यामां नव गुण ।** अर्थात् न बोलने में नौ गुण हैं । जो ज्यादा बोलते हैं वे झूठ बोलते हैं, झगड़े उत्पन्न करते हैं और अपनी आयु क्षीण करते हैं । किसीके साथ बात करो तो कम-से-कम, स्नेहयुक्त एवं सारगर्भित बात करो । इससे तुम्हारी वाणी का एवं तुम्हारा प्रभाव पड़ेगा ।

ब्रह्मज्ञानी महापुरुष एक स्मितभरी नजर डालते हैं और पूरा जनसमुदाय तन्मय हो जाता है । अरे ! मनुष्यों की तो क्या बात, ब्रह्मलोक तक के देवी-देवता भी उनके अनुकूल हो जाते हैं । हम उनका माहात्म्य नहीं जानते इसीलिए 'हा-हा... ही-ही...' में अपना जीवन गँवा डालते हैं । हमें पता ही नहीं है कि हमारे भीतर कितना खजाना भरा पड़ा है और हम कितना, किस प्रकार उसे खर्च कर रहे हैं !

ज्ञानवानों का स्मित ऐसा अनोखा होता है जिससे कोई भी सहज में ही उनके प्रति अहोभाव से भर जाता है । श्रीकृष्ण अपनी स्मितभरी नजर डालकर बंसी बजाते थे तो सब ग्वाल-गोपियों के चित्त सहज में ही पवित्र हो जाते थे । उसी प्रकार ब्रह्मज्ञानी महापुरुष की स्मितभरी नजर से लोगों का चित्त पवित्र होने लगता है ।

निगाहों से वे निहाल हो जाते हैं,
जो संतों की निगाहों में आ जाते हैं ।

तुम भी अपनी दृष्टि ऐसी ही बनाओ । ऐसा नहीं कि व्यर्थ का इधर-उधर भटकते रहो, व्यर्थ बोलते रहो एवं अपने ज्ञानतंतुओं, अपनी रक्तवाहिनियों, अपने शरीर एवं मन को सताते रहो ।

जीवन में निर्भयता, आहारशुद्धि, तप एवं मौन - ये गुण आ जायें तो जीवन काफी उन्नत हो जाय और यह काम तुम कर सकते हो । युद्ध के मैदान में अगर अर्जुन यह काम कर सकता है तो तुम क्यों नहीं कर सकते ? अर्जुन तो कितनी विपत्तियों के बीच था, फिर भी श्रीकृष्ण ने उसको गीता का उपदेश दिया था । तुम्हारे आगे इतनी झंझटें नहीं हैं भाई ! बस, कमर कस लो इन दैवी गुणों को अपनाने के लिए... निर्भयता, आहार-संयम, तप एवं मौन को आत्मसात् करने के लिए ।

'हम क्या करें ? हम तो गृहस्थी हैं... हम तो संसारी हैं... हम तो नौकरीवाले हैं...' अरे ! तुम्हारे साथ संसार की जितनी झंझटें हैं, उससे ज्यादा झंझटें पहले के समय में थीं । फिर भी हिम्मतवान, बुद्धिमान पुरुषों ने समय बचाकर विकारों एवं बेवकूफियों पर विजय पा ली एवं अपने आत्मा-परमात्मा को, अपने रब को पहचान लिया ।

प्रह्लाद के जीवन में कितने विघ्न आये ! मीराबाई के जीवन में कितनी मुसीबतें आयीं ! फिर भी वे अडिग रहीं, निर्भय रहीं, हताश-निराश न हुईं तो कितनी उन्नत हो गयीं !

तुम भी उन्नत हो सकते हो, अपने-आपको जान सकते हो । शर्त इतनी ही है कि दैवी गुणों को बढ़ाओ, पुरुषार्थ करो एवं सत्संग अवश्य करो । सत्संग से ही तुम्हें अपने दैवी गुणों को विकसित करने की प्रेरणा मिलेगी, प्रोत्साहन मिलेगा, मार्गदर्शन मिलेगा, उत्साह उभरेगा । निर्भयता, आहारशुद्धि, वाणी का संयम एवं तप - इन दैवी गुणों का विकास तुम्हारे लिए उन्नति का द्वार सहजता से ही खोल देगा । अतः आज से, अभी से दृढ़ता से लगो । लगोगे न ? □

आखिर क्या काम आयेगा ?

(पूज्य बापूजी की परम हितकारी वाणी)

आप राजा परीक्षित का अनुकरण करो । परीक्षित राजा जब विचरण करते थे, तब यह चिंतन करते थे कि आखिर क्या ? संसार के सब काम पूरे हो गये तो क्या और अधूरे रह गये तो क्या ! ऋषि कुमार शमीक का शाप मिलने से उनके चित्त में वैराग्य तो था ही, साथ ही जब शुकदेवजी जैसे महान ब्रह्मवेत्ता का सत्संग मिल गया एवं आत्मचिंतन में तत्परता से लग गये तो मात्र सात दिनों में ही उन्होंने आत्मशांति-आत्मज्ञान पाया और इनके उद्‌गम-स्थान अपने 'सोऽहम्' स्वभाव को भी जान लिया, परम तत्त्व का साक्षात्कार कर लिया ।

यदि तुम भी अपना काम शीघ्र बनाना चाहते हो, भागवत के धर्म को पाना चाहते हो तो परीक्षित की तरह सजग हो जाओ कि 'इतना खाया, इतना पिया, इतना घूमे, इतना छल-कपट किया लेकिन आखिर में इनमें से क्या काम आयेगा ?' □

मेरे समर्थ सद्गुरु आप हैं...

मेरे समर्थ सद्गुरु आप हैं,
भवनिधि से तारणहारे।
जग से न्यारे सबके प्यारे,
साक्षी हर दिल के दुलारे ॥
हुआ हृदय है पावन-पावन,
धन्य-धन्य हो गया है जीवन।
पुलकित हो उठा है तन-मन,
किया गुरु का जब से चिंतन ॥ मेरे...
गुरुमंत्र है परम सहारा,
मन-मंदिर का है उजियारा।
हरिरस की है छलकी धारा,
स्वर्ग से बढ़कर गुरु का द्वारा ॥ मेरे...
अद्भुत गुरुवर का दीदार,
मिटे भेद सब भरम विकार।
छा जाये यों आत्म-खुमार,
शम-संतोष हों दिव्य विचार ॥ मेरे...
सदा बरसती गुरु की रहमत,
राम रतन और नाम की दौलत।
छुटे द्वैत औ' दुर्गुण की लत,
होता प्राणी बंधन से मुक्त ॥ मेरे...
गुरु आतम, ईश्वर, देवेश,
ब्रह्मा, विष्णु, शेष, महेश।
अच्युत, अनंत, वही अखिलेश,
धारण कर मानव का वेश ॥ मेरे...
गुरु नित्य हैं ब्रह्मस्वरूप,
घट-घट व्यापक है वही रूप।
नित्य मुक्त, निर्लेप, अनूप,
निजानंदमय ज्योतिस्वरूप ॥ मेरे...

– जानकी चंदनानी

संत सुपावन नाम...

दिव्य आभामंडल वदन, नील सरोरुह श्याम।
चन्द्र सुधा शीतल मन, नयन ज्योति अभिराम ॥
रूप राम घनश्याम के, जैसे वीतराग निष्काम।
जगदम्बा पद पंकज, अचला भक्ति ललाम ॥
जिनके मानस पटल में, दैवी गुण विश्राम।
महात्मा अनंत श्री आशारामजी, संत सुपावन नाम ॥
ज्ञान ध्यान विद्या प्रबल, चमत्कार परिणाम।
धर्म कर्म संघर्ष नित, सत्योदय सुखधाम ॥
देश धर्म चिंतन सदा, करते आठों याम।
हानि-लाभ दुःख-सुख सभी, लीला के आयाम ॥
युग परिवर्तन के लिए, करें देवासुर संग्राम।
करें-करावें आसुरी वृत्ति से, धर्मयुद्ध अविराम ॥
जनक संस्कृति क्रांति के, कभी नहीं उपराम।
चर्चित सारे जगत में, क्या नगरी क्या ग्राम ॥
धन्य संत श्री आशारामजी, धन्य सनातन धाम।
विश्ववंदनीय गुरुवर के चरणों में,
कोटि-कोटि प्रणाम ॥

– के. एल. पटेल (जादूगर)
नरसिंहपुर (म.प्र.)

व्रत, पर्व और त्यौहार

२० मई : कंकणाकृति सूर्यग्रहण (भारत के पूर्व भाग में खंडग्रास दिखेगा, अन्य भागों में नियम-पालन जरूरी नहीं है।)
२४ मई : महाराणा प्रताप जयंती, छत्रसाल जयंती
२५ मई : गुरु अर्जुनदेव शहीदी दिवस
२७ मई : रविवारी सप्तमी (दोपहर २-३० से २८ मई के सूर्योदय तक)
५ जून : गुरु हरगोविंदसिंह जयंती, विश्व पर्यावरण दिवस
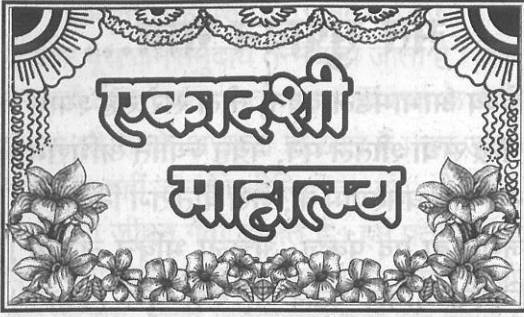
सर्वपापनाशक व्रत

(अपरा एकादशी : १६ मई)

युधिष्ठिर ने पूछा : ''जनार्दन ! ज्येष्ठ मास के कृष्ण पक्ष में किस नाम की एकादशी होती है ? मैं उसका माहात्म्य सुनना चाहता हूँ। उसे बताने की कृपा कीजिये।''

भगवान श्रीकृष्ण बोले : ''राजन् ! आपने सम्पूर्ण लोकों के हित के लिए बहुत उत्तम बात पूछी है। राजेन्द्र ! ज्येष्ठ (गुजरात-महाराष्ट्र के अनुसार वैशाख) मास के कृष्ण पक्ष की एकादशी का नाम 'अपरा' है। यह बहुत पुण्य प्रदान करनेवाली और बड़े-बड़े पातकों का नाश करनेवाली है। ब्रह्महत्या से दबा हुआ, गोत्र की हत्या करनेवाला, गर्भस्थ बालक को मारनेवाला, परनिंदक तथा परस्त्रीलम्पट पुरुष भी 'अपरा एकादशी' के सेवन से निश्चय ही पापरहित हो जाता है। जो झूठी गवाही देता है, माप-तौल में धोखा देता है, बिना जाने ही नक्षत्रों की गणना करता है और कूटनीति से आयुर्वेद का ज्ञाता बनकर वैद्य का काम करता है... ये सब नरक में निवास करनेवाले प्राणी हैं। परंतु 'अपरा एकादशी' के सेवन से ये भी पापरहित हो जाते हैं। यदि कोई क्षत्रिय अपने क्षात्रधर्म का परित्याग करके युद्ध से भागता है तो वह क्षत्रियोचित धर्म से भ्रष्ट होने के कारण घोर नरक में पड़ता है। जो एक बार गुरु मानकर उनकी निंदा करता है अथवा गुरु का प्रसाद पाने के बाद भी उनकी निंदा करता है, वह नारकीय योनियों में जाता है और नरक का दुःख भोगता है। यदि ऐसा आदमी भी अपरा एकादशी का व्रत रखे तो उसकी भी सद्गति होती है।

माघ में जब सूर्य मकर राशि पर स्थित हो, उस समय प्रयाग में स्नान करनेवाले मनुष्यों को जो पुण्य होता है, काशी में शिवरात्रि का व्रत करने से जो पुण्य प्राप्त होता है, गया में पिंडदान करके पितरों को तृप्ति प्रदान करनेवाला पुरुष जिस पुण्य का भागी होता है, बृहस्पति के सिंह राशि पर स्थित होने पर गोदावरी में स्नान करनेवाला मानव जिस फल को प्राप्त करता है, बदरिकाश्रम की यात्रा के समय भगवान केदार के दर्शन से एवं बदरीतीर्थ के सेवन से जो पुण्य-फल उपलब्ध होता है तथा सूर्यग्रहण के समय कुरुक्षेत्र में दक्षिणासहित यज्ञ करके हाथी, घोड़ा और सुवर्ण दान करने से जिस फल की प्राप्ति होती है, 'अपरा एकादशी' के सेवन से भी मनुष्य वैसे ही फल प्राप्त करता है। 'अपरा' को उपवास करके भगवान वामन की पूजा करने से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो श्रीविष्णुलोक में प्रतिष्ठित होता है। इस माहात्म्य को पढ़ने और सुनने से सहस्र गोदान का फल मिलता है।''

वर्ष भर की एकादशियों का फल देनेवाला व्रत

(निर्जला एकादशी : १ जून)

युधिष्ठिर ने कहा : ''जनार्दन ! ज्येष्ठ मास के शुक्ल पक्ष में जो एकादशी आती हो, कृपया उसका वर्णन कीजिये।''

भगवान श्रीकृष्ण बोले : ''राजन् ! उसका वर्णन परम धर्मात्मा सत्यवतीनंदन व्यासजी करेंगे क्योंकि ये सम्पूर्ण शास्त्रों के तत्त्वज्ञ और वेद-वेदांगों के पारंगत विद्वान हैं।''

तब वेदव्यासजी कहने लगे : ''दोनों ही पक्षों की एकादशियों के दिन मनुष्य भोजन न करे। द्वादशी के दिन स्नान आदि से पवित्र हो फूलों से भगवान केशव की पूजा करे। फिर नित्यकर्म समाप्त होने के

पश्चात् पहले ब्राह्मणों को भोजन देकर अंत में स्वयं भोजन करे। राजन् ! जननाशौच और मरणाशौच में भी एकादशी को भोजन नहीं करना चाहिए।''

भीमसेन बोले : ''परम बुद्धिमान पितामह ! मेरी उत्तम बात सुनिये। राजा युधिष्ठिर, माता कुंती, द्रौपदी, अर्जुन, नकुल और सहदेव - ये एकादशी को कभी भोजन नहीं करते तथा मुझसे भी हमेशा यही कहते हैं कि 'भीमसेन ! तुम भी एकादशी को न खाया करो।' किंतु मैं उन लोगों से यही कहता हूँ कि मुझसे भूख नहीं सही जायेगी।''

व्यासजी : ''यदि तुम्हें स्वर्गलोक की प्राप्ति अभीष्ट है और नरक को दूषित समझते हो तो दोनों पक्षों की एकादशियों के दिन भोजन न करना।''

भीमसेन : ''महाबुद्धिमान पितामह ! मैं आपके सामने सच्ची बात कहता हूँ। एक बार भोजन करके भी मुझसे व्रत नहीं किया जा सकता, फिर उपवास करके एकदम निराहार तो मैं रह ही कैसे सकता हूँ ! मेरे उदर में वृक नामक अग्नि सदा प्रज्वलित रहती है, अतः जब मैं बहुत अधिक खाता हूँ तभी यह शांत होती है। इसलिए महामुने ! मैं वर्ष भर में केवल एक ही उपवास कर सकता हूँ। जिससे स्वर्ग की प्राप्ति सुलभ हो तथा मैं कल्याण का भागी हो सकूँ, ऐसा कोई एक व्रत निश्चय करके बताइये। मैं उसका यथोचित रूप से पालन करूँगा।''

व्यासजी ने कहा : ''भीम ! ज्येष्ठ मास में सूर्य वृषभ राशि पर हो या मिथुन राशि पर, शुक्ल पक्ष में जो एकादशी हो, उसका यत्नपूर्वक निर्जल व्रत करो। केवल कुल्ला या आचमन करने के लिए मुख में जल डाल सकते हो, उसको छोड़कर किसी प्रकार का जल विद्वान पुरुष मुख में न डाले, अन्यथा व्रत भंग हो जाता है। एकादशी को सूर्योदय से लेकर दूसरे दिन के सूर्योदय तक मनुष्य जल का त्याग करे तो यह व्रत पूर्ण होता है। तदनंतर द्वादशी को प्रभातकाल में स्नान करके सदाचारी ब्राह्मणों को विधिपूर्वक जल और सुवर्ण का दान करे। इस प्रकार सब कार्य पूरे करके जितेन्द्रिय पुरुष सदाचारी ब्राह्मणों के साथ भोजन करे। वर्ष भर में जितनी एकादशियाँ होती हैं, उन सबका फल निर्जला एकादशी के सेवन से मनुष्य प्राप्त कर लेता है, इसमें तनिक भी संदेह नहीं है। शंख, चक्र और गदा धारण करनेवाले भगवान केशव ने मुझसे कहा था कि 'यदि मानव सबको छोड़कर एकमात्र मेरी शरण में आ जाय और एकादशी को निराहार रहे तो वह सब पापों से छूट जाता है।'

एकादशी व्रत करनेवाले पुरुष के पास विशालकाय, विकराल आकृति और काले रंगवाले दंड-पाशधारी भयंकर यमदूत नहीं जाते। अंतकाल में पीताम्बरधारी, सौम्य स्वभाववाले, हाथ में सुदर्शन चक्र धारण करनेवाले और मन के समान वेगशाली विष्णुदूत उस वैष्णव पुरुष को भगवान विष्णु के धाम में ले जाते हैं। अतः निर्जला एकादशी को पूर्ण यत्न करके उपवास और श्रीहरि का पूजन करो। स्त्री हो या पुरुष, यदि उसने मेरु पर्वत के बराबर भी महान पाप किया हो तो वह सब इस एकादशी व्रत के प्रभाव से भस्म हो जाता है। जो मनुष्य उस दिन जल के नियम का पालन करता है, वह पुण्य का भागी होता है। उसे एक-एक प्रहर में कोटि-कोटि स्वर्णमुद्राएँ दान करने का फल प्राप्त होता सुना गया है। 'मनुष्य निर्जला एकादशी के दिन स्नान, दान, जप, होम आदि जो कुछ भी करता है, वह सब अक्षय होता है।'- यह भगवान श्रीकृष्ण का कथन है। निर्जला एकादशी को विधिपूर्वक उत्तम रीति से उपवास करके मानव वैष्णव पद को प्राप्त कर लेता है। जो मनुष्य एकादशी के दिन अन्न खाता है, वह पाप का भोजन करता है। इस लोक में वह चांडाल के समान है और मरने पर दुर्गति को प्राप्त होता है।

जो मनुष्य ज्येष्ठ के शुक्ल पक्ष में एकादशी को उपवास करके दान करेंगे, वे परम पद को प्राप्त होंगे।''

(विस्तृत जानकारी के लिए आश्रम से प्रकाशित 'एकादशी व्रत कथाएँ' पुस्तक पढ़ें।) ❑

वीर्यरक्षण की महत्ता

वीर्य के एक-एक अणु में महान शक्तियाँ छिपी हैं। इसीके द्वारा आद्य शंकराचार्यजी, महावीर स्वामी, कबीरजी, नानकजी, लीलाशाहजी बापू जैसे महापुरुष धरती पर अवतीर्ण हुए हैं । बड़े-बड़े वीर, योद्धा, वैज्ञानिक, साहित्यकार - ये सब वीर्य की एक बूँद में छिपे थे और अभी आगे भी पैदा होते रहेंगे। इतने बहुमूल्य वीर्य का सदुपयोग जो व्यक्ति नहीं कर पाता, वह अपना पतन आप आमंत्रित करता है।

वीर्यं वै भर्गः । 'वीर्य ही तेज है, आभा है, प्रकाश है।' **(शतपथ ब्राह्मण)**

जीवन को ऊर्ध्वगामी बनानेवाली ऐसी बहुमूल्य वीर्यशक्ति को जिसने भी खोया, उसको कितनी हानि उठानी पड़ी, यह कुछ उदाहरणों के द्वारा हम समझ सकते हैं ।

भीष्म पितामह और वीर अभिमन्यु

'महाभारत' में ब्रह्मचर्य से संबंधित दो प्रसंग आते हैं : एक भीष्म पितामह का और दूसरा वीर अभिमन्यु का । भीष्म पितामह बालब्रह्मचारी थे, इसलिए उनमें अथाह सामर्थ्य था । भगवान श्रीकृष्ण का यह व्रत था कि 'मैं युद्ध में शस्त्र नहीं उठाऊँगा ।' किंतु यह भीष्म की ब्रह्मचर्यशक्ति का ही चमत्कार था कि उन्होंने श्रीकृष्ण को अपना व्रत भंग करने के लिए मजबूर कर दिया। उन्होंने अर्जुन पर ऐसी बाणवर्षा की कि दिव्यास्त्रों से सुसज्जित अर्जुन जैसा धुरंधर धनुर्धारी भी उसका प्रतिकार करने में असमर्थ हो गया, जिससे उसकी रक्षार्थ भगवान श्रीकृष्ण को रथ का पहिया लेकर भीष्म की ओर दौड़ना पड़ा।

यह ब्रह्मचर्य का ही प्रताप था कि भीष्म मौत पर भी विजय प्राप्त कर सके। उन्होंने यह स्वयं ही तय किया कि उन्हें कब शरीर छोड़ना है। अन्यथा शरीर में प्राणों का टिके रहना असम्भव था परंतु भीष्म की आज्ञा के बिना मौत भी उनसे प्राण कैसे छीन सकती थी ! भीष्म ने स्वेच्छा से शुभ मुहूर्त में अपना शरीर छोड़ा।

दूसरी ओर अभिमन्यु का प्रसंग आता है । महाभारत के युद्ध में अर्जुन का वीर पुत्र अभिमन्यु चक्रव्यूह का भेदन करने के लिए अकेला ही निकल पड़ा था। भीम भी पीछे रह गया था। उसने जो शौर्य दिखाया वह प्रशंसनीय था । बड़े-बड़े महारथियों से घिरे होने पर भी वह रथ का पहिया लेकर अकेला युद्ध करता रहा परंतु आखिर में मारा गया। इसका कारण यह था कि युद्ध में जाने से पूर्व वह अपना ब्रह्मचर्य खंडित कर चुका था। वह उत्तरा के गर्भ में पांडव वंश का बीज डालकर आया था। मात्र इतनी छोटी-सी भूल के कारण वह पितामह भीष्म की तरह अपनी मृत्यु का आप मालिक नहीं बन सका।

पृथ्वीराज चौहान क्यों हारे ?

मुहम्मद गौरी को बुरी तरह हरानेवाले वीर महायोद्धा, शक्ति व सामर्थ्य के साक्षात् मूर्तिस्वरूप पृथ्वीराज चौहान बाद में गौरी से ही कैसे हार गये ? कहते हैं जिस दिन वे हारे थे उस दिन वे अपनी पत्नी से अपनी कमर कसवाकर अर्थात् अपना वीर्यनाश कर युद्धभूमि में आये थे । ('द कम्प्लीट वर्क्स ऑफ स्वामी रामतीर्थ'-४, पृष्ठ ६१) यह है वीर्यशक्ति के व्यय का दुष्परिणाम ! गौरी ने बाद में उनकी आँखें लोहे की गर्म सलाखों से फुड़वा दीं।

'रामायण' के पात्र रामभक्त हनुमान के कई अद्‌भुत पराक्रम तो हम सबने सुने ही हैं । जैसे - आकाश में उड़ना, समुद्र लाँघना, रावण की सभा में से छूटकर लंका जलाना, युद्ध में रावण को मुक्का मारकर मूर्च्छित कर देना, संजीवनी बूटी के लिए पूरा पहाड़ ही उठा लाना आदि । यह सब ब्रह्मचर्य की शक्ति का ही प्रताप था ।

फ्रांस का सम्राट नेपोलियन कहा करता था : ''असम्भव शब्द मेरे शब्दकोश में ही नहीं है ।'' परंतु वह भी हार गया । हारने के मूल कारणों में एक कारण यह भी था कि युद्ध से पूर्व ही उसने स्त्री के आकर्षण में अपने वीर्य का क्षय कर दिया था ।

सेम्सन भी शूरवीरता के क्षेत्र में बहुत प्रसिद्ध था । 'बाइबिल' में उसका उल्लेख आता है । वह भी स्त्री के मोहक आकर्षण से नहीं बच सका और उसका पतन हो गया ।

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'दिव्य प्रेरणा-प्रकाश' से क्रमशः)

ढूँढ़ो तो जानें

नीचे दी गयी वर्ग-पहेली में मनुष्य-शरीर में पाये जानेवाले सात यौगिक चक्रों के नाम खोजें ।

र	त्र्य	ब	अ	ला	व	द	ण	स	पू
ए	फ	पु	शं	स्र	न	ब	य	ग	व
गण	च	मू	य	त	जी	पु	अ	ज्ज	ठ
ध	न	ढ़	ला	व	द्धा	मां	व	स्वा	द
क्ष	त	स्य	णी	धा	ज्ञा	सो	धि	वै	इ
प्र	क	ह	स	आ	र	ष्ठा	थ	ख्य	स
ठ	ध	घ	ना	पु	न	स्रा	द्धा	मू	ज्ञ
औ	जू	म्ब	णि	अ	द्वे	शु	ह	ञ	धा
भ	या	म	ऋ	ब	वि	ह	ई	स	क्र
ती	श	प	ठ	ख	त्र	र	झ	ध्रु	भा

अंक २३२ की वर्ग-पहेली के उत्तर

अष्टांग योग : यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि ।

साहिब की प्यास किसने बुझायी ?

(पूज्य बापूजी की मधुमय अमृतवाणी)

'भक्तमाल' में एक कथा आती है : आगरा में एक भक्त रहते थे, प्रेमनिधि उनका नाम था । वे भगवान को एकटक देखते और सबमें भगवान हैं ऐसा भाव रखते । प्रतिदिन वे यमुनाजी से जल लाकर भगवान को स्नान कराते, भोग लगाते तथा भोजन के बाद पानी का घूँट पिलाते । फिर वह भोग-प्रसाद सभीको बाँट देते । उस समय यमुनाजी में दिल्ली के गटर और गंदे नालों का पानी नहीं आता होगा ।

एक दिन वर्षा ऋतु के कारण जहाँ-तहाँ कीचड़ हो गया । वे सुबह-सुबह जल्दी उठे कि भगवान के लिए जल ले आता हूँ, ताकि किसी पापी, निगुरे आदमी की नजर न पड़े । अँधेरे-अँधेरे में गये तो रास्ता दिखायी नहीं दे रहा था ।

इतने में देखा कि एक लड़का मशाल लेकर आगे जा रहा है । उन्होंने सोचा, 'यह क्या है ! चलो, यह लड़का जहाँ जाता है, इसके पीछे-पीछे मशाल का फायदा उठाऊँ । यह तो कहीं चला जायेगा फिर लौटते समय देखा जायेगा ।' लेकिन ऐसा नहीं हुआ । मशाल लेकर वह लड़का उन्हें यमुनाजी तक ले आया । उन्होंने यमुनाजी में स्नान कर जल भरा । ज्यों ही वे चलने लगे तो एकाएक वह लड़का फिर आ गया और आगे-आगे चलने लगा । उसने उन्हें उनकी कुटिया तक पहुँचाया । फिर वे 'बेटा ! तू कहाँ से आया ?' पूछें, उसके पहले वह बेटा अंतर्धान हो गया ।

प्रेमनिधि भगवान के प्रति प्रेम रखते थे तो भगवान भी कभी किसी रूप में, कभी किसी रूप में उनका मार्गदर्शन करने को आ जाते थे।

उस समय यवनों का राज्य था। हिन्दू साधुओं को नीचा दिखाना और अपने मजहब का प्रचार करना - ऐसी मानसिकतावाले लोगों ने बादशाह को जाकर भड़काया कि 'प्रेमनिधि के पास औरतें भी बहुत आती हैं। लड़कियाँ, बच्चे, भाई सब आते हैं। इसका चाल-चलन ठीक नहीं है।' प्रेमनिधि का बढ़ता हुआ प्रभाव देखकर मुल्ला-मौलवियों और बादशाह के पिट्ठुओं ने बादशाह को बहकाया। बादशाह ने उनके बहकावे में आकर आदेश दिया कि 'प्रेमनिधि को यहाँ हाजिर करो !'

उस समय प्रेमनिधि भगवान को पिलाने के भाव से जल भर रहे थे। एकाएक सिपाहियों ने कहा : ''चलो, बादशाह सलामत बुला रहे हैं। जल्दी करो।'' तो वे भगवान को जल पिलाये बिना ही निकल गये। अब मन में खटका था कि 'ठाकुरजी को भोजन तो कराया परंतु जल तो नहीं पिलाया।' बादशाह के पास ले आये तो उसने पूछा : ''तुम क्यों सभीको आने देते हो ?''

बोले : ''सभीमें मेरा परमात्मा है। किसी भी रूप में - माई हो, भाई हो, कोई भी हो, सत्संग में आते हैं तो उनका पाप नाश हो जाता है, बुद्धि शुद्ध हो जाती है, मन पवित्र हो जाता है और सबका भला होता है इसलिए मैं सत्संग में सबको आने देता हूँ। मैं कोई संन्यासी नहीं हूँ कि स्त्रियों को नहीं आने दूँ। मेरा तो गृहस्थ-जीवन है। भले मैं गृहस्थ के विकारों में नहीं हूँ, फिर भी गृहस्थ-परम्परा में ही तो मैं जी रहा हूँ !''

बादशाह ने कहा : ''तुम्हारी बात तो सच्ची लगती है लेकिन तुम काफिर हो। जब तक तुम्हारा पर्चा (चमत्कार द्वारा परिचय) नहीं मिलेगा, तब तक तुमको कैदखाने की कोठरी में बंद करने का हुक्म देते हैं। बंद कर दो इसको।'' प्रेमनिधि तो बंद हो गये।

अंदर से जो आदमी गिरा है वही कैदखाने में दुःखी होता है। अंदर से जिसकी समझ मरी हुई है वह जरा-जरा बात में दुःखी होता है। जिसकी समझ सही है वह दुःख को तुरंत उखाड़ फेंकनेवाली बुद्धि जगा देता है : 'क्या हुआ ! जो होगा ठीक होगा, बीत जायेगा, देखा जायेगा।' वह दुःख में दुःखी नहीं होता। प्रेमनिधि को तो भगवान को जलपान कराना था। वे सोचते रहे, 'अब कैदखाने में आ गया शरीर, तो ठाकुरजी को जलपान कैसे करायें ?' रात बीत गयी। बादशाह सलामत को मुहम्मद साहब सपने में दिखायी दिये, बोले : ''हे बादशाह ! अल्लाह को प्यास लगी है।''

''मालिक ! हुक्म करो। अल्लाह किसके हाथ से पानी पियेंगे ?''

बोले : ''जिसके हाथ से अल्लाह पानी पियेंगे उसको तुमने कैदखाने में डाल रखा है।''

बादशाह सलामत की धड़कनें बढ़ गयीं। देखता है कि अल्लाहताला और मुहम्मद साहब बड़े नाराज दिखायी दे रहे हैं। मैंने जिसको बंद किया, वह तो प्रेमनिधि है। जल्दी-जल्दी प्रेमनिधि को रिहा करवाया।

साहब सूरत में बसे। सबकी सूरत में परब्रह्म-परमात्मा हैं। बादशाह प्रेमनिधि से प्रभावित हुआ और चरणों में पड़कर बोला : ''साहब को प्यास लगी है, आप शीघ्र जाकर पानी पिलाओ। बदले में यह इनाम ले लो, यह चीज ले लो।''

बोले : ''नहीं, हमें ये बाहर की चीजें नहीं चाहिए। भगवान की रसमयी, आनंदमयी, ज्ञानमयी भक्ति चाहिए।''

बादशाह ने उसी समय प्रेमनिधि को घर भिजवा दिया। प्रेमनिधि नहाये-धोये, फिर भगवान को जलपान कराया। बाहशाह सलामत हिन्दुओं के प्रति जो नफरत का नजरिया रखता था, उसका वह नजरिया बदल गया और वह प्रेमनिधि महाराज का भक्त हो गया। ❒

जीवन के मूलभूत प्रश्न

एक समय किसी एकांत स्थान में वसिष्ठजी के पौत्र व शक्ति के पुत्र पराशरजी बैठे हुए थे। उसी समय मित्रा के पुत्र मैत्रेयजी ने आकर वेद-विधिपूर्वक पराशरजी को गुरु मानकर पूर्ण श्रद्धा से हाथ जोड़ के गुरु-शिष्य रीति के अनुसार पराशरजी से प्रश्न किया : ''हे भगवन् ! इस संसाररूपी देह-मंदिर में मैं कौन हूँ ? मैं जीव हूँ या ईश्वररूप हूँ या ब्रह्म हूँ अथवा जड़रूप हूँ या चेतनरूप हूँ ? सर्वशक्तिमान हूँ या सर्वशक्तिरहित हूँ ? माया और अविद्या के संबंधवाला हूँ या इनके संबंध से रहित हूँ ? सुख-दुःख का कारण जो धर्माधर्म है वह हूँ कि उससे रहित हूँ ? नित्य या अनित्य हूँ ? दृश्य हूँ कि द्रष्टा हूँ या दृश्य-द्रष्टा उभयरूप हूँ अथवा इनसे रहित हूँ ?

हे दीनबंधो ! कृपालु गुरो !! इस देह के होने से मैं सगुणरूप हूँ कि सत्तामात्र होने से निर्गुणरूप हूँ ? अनंत हूँ कि अंतवाला हूँ ? मधुर रसादिरूप हूँ या इनसे रहित हूँ ? व्यापक हूँ कि सीमित हूँ ? असंग हूँ कि संगी हूँ ? मैं मृत्यु को प्राप्त होता हूँ या नहीं ? मन, इन्द्रियों के द्वारा मैं जानने में आता हूँ कि नहीं ?

मैं निष्कर्तव्य हूँ कि सकर्तव्य हूँ ? मैं बंधरूप हूँ कि मोक्षस्वरूप हूँ या इनसे रहित हूँ ? गुरु के उपदेश या शास्त्र द्वारा मैं जानने में आता हूँ कि नहीं ? देश, काल, वस्तुस्वरूप हूँ कि इनसे रहित हूँ ? नाम, रूप, स्वरूप हूँ या इनसे रहित हूँ ?

हे भगवन् ! मैं आदि हूँ कि अनादि हूँ ? सच्चिदानंदस्वरूप हूँ कि नहीं ? यज्ञ-दानादिरूप हूँ कि इनसे रहित हूँ ? स्वामी हूँ कि दास हूँ ? स्थावर हूँ कि जंगम हूँ ? बालक हूँ, युवा हूँ, वृद्ध हूँ या बालकादि अवस्थाओं से रहित हूँ ? सुंदररूप हूँ कि असुंदररूप हूँ ? सुख-दुःखरूप हूँ कि इनसे रहित हूँ ? इत्यादि उक्त पदार्थों के मध्य में मैं कौन हूँ ? हे शांतिदायक कृपालो ! सर्वहितेच्छु ! सर्व शिष्यों के संतापनाशक करुणानिधे ! हे अज्ञाननाशक दीनबंधो ! हे यथार्थदर्शी ! हे संशयविध्वंसक सद्गुरो ! इस संशयरूपी समुद्र से आप कृपा करके मुझको पार करो क्योंकि मैं आपकी शरण हूँ।''

इस प्रकार श्रद्धावान शिष्य मैत्रेय की रसभरी वाणी सुन के श्री पराशर मुनि ने सभी प्रश्नों का केवल एक ही उत्तर से समाधान किया : ''हे मैत्रेय ! पूर्वोक्त जो तुमने देह से लेकर अज्ञानपर्यंत सभी पदार्थ कहे हैं, वे तू नहीं है क्योंकि अज्ञान और अज्ञान के कार्य जो सभी पदार्थ हैं, वे परस्पर व्यभिचारी हैं, परस्पर अपेक्षावाले हैं, आपस में कार्य-कारण भाववाले हैं, चेतन के दृश्य हैं, देश, काल, वस्तु, परिच्छेदवाले हैं, षड्भाव विकारवाले हैं, अतिशयतादि दोषवाले हैं। भ्रमज्ञान के विषय हैं, जड़ हैं, स्वप्नवत् प्रतीतिमात्र हैं, अविद्या के परिणाम हैं, चेतन के विवर्त हैं, वस्तुतः सत्य नहीं हैं।

हे मैत्रेय ! वास्तव में जो तुमने देह से लेकर अज्ञानपर्यंत पूर्व-पदार्थ कहे हैं तथा अन्य भी अनेक पदार्थ हैं, उन सबका ज्ञान व अनुभव मन-वाणी के द्वारा हो सकता है किंतु तुम्हारा स्वरूप अवाङ्मनसगोचर है (वाणी व मन से जानने या अनुभव करने का विषय नहीं है)। सभी जीव जिस विषय-सुख को नित्यप्रति अनुभव करते हैं, वह जो शब्द-स्पर्श आदि विषयजन्य सुख है, उसको भी जब साक्षात् दृश्य की तरह कहने तथा जानने को कोई भी समर्थ नहीं होता तो सभी प्रकार से अवाङ्मनसगोचर जो सर्व का आत्मस्वरूप सुख है, उसको साक्षात् किसी मिस (गूढ़ उद्देश्य बताने के लिए किसी बात के

वास्तविक रूप की जगह दूसरा रूप) के बिना विद्वान कैसे कहेंगे और मुमुक्षु कैसे जानेंगे ? अर्थात् कहना और जानना कुछ भी नहीं होगा । किसी एक मिस से इसका कहना और जानना दोनों ही हो सकता है, जैसे मन के द्वारा भी अचिंतनीय है रचना जिसकी, ऐसा जो यह जगत है, इसकी उत्पत्ति, पालन और संहाररूप व्यवहार जो करनेवाला है, वह जगत का स्वामी परमात्मा है ।

इस तटस्थ लक्षण द्वारा जैसे परमात्मा का स्वरूप जानने में आता है तथा जैसे चित्रों को देखकर चित्रकार का होना अनुमान किया जाता है, वैसे ही हे सुबुद्धिमान मैत्रेय ! सुख-दुःख आदि सभी पदार्थ जिससे सिद्ध होते हैं, वही तुम्हारा स्वरूप है तथा मन के फुरने से प्रथम स्वतःसिद्ध है ।''

(क्रमशः) ☐

संत वाणी

गुरु की महिमा को कहै, शिव विरंचि नहिं जान ।
गुरु सतगुरु को चीन्हि के, पावै पद निरबान ॥
जाके सिर गुरु ज्ञान है, सोइ तरत भव मांहि ।
गुरु बिन जानो जन्तु को, कबहुँ मुक्ति सुख नाहिं ॥
स्नेह प्रेम गुरु चरण सों, जिहि प्रकार से होय ।
क्या नियरै क्या दूर सब, प्रेम भक्त सुख सोय ॥

– संत कबीरजी

सुन्दर सद्गुरु आपुतें मुक्त किये गृह कूप ।
कर्म कालिमा दूरि करि कीये शुद्ध स्वरूप ॥
सद्गुरु शब्द सुनाइ करि दीया ज्ञान विचार ।
सुन्दर सूर प्रकासिया मेट्या सब अंधियार ॥
सद्गुरु कही मरंम की हिरदै बैसी आइ ।
रीति सकल संसार की सुन्दर दई बहाइ ॥

– संत सुंदरदासजी

बापूजी की शिक्षाओं से जीवन को सुंदर बनायेंगे

हमारे देश में संस्कार ये हैं कि माता-पिता बच्चों को बड़ा करते हैं और जब बच्चे बड़े हो जाते हैं तथा माता-पिता बूढ़े हो जाते हैं तो बच्चे माता-पिता की बहुत स्नेह-प्यार से सेवा करते हैं । यह व्यवस्था हमारे देश में ही है, और कहीं नहीं है । और यह हमारे देश में हमेशा चलती रहेगी क्योंकि परम पूज्य बापूजी हम लोगों को जो संस्कार दे रहे हैं, उन संस्कारों में यही बातें हैं कि किस प्रकार हम बड़ों की सेवा करें और उनके साथ कैसा व्यवहार करें ।

बापूजी को प्रणाम ! आपके द्वारा मिली हुई शिक्षाओं से हम अपने जीवन को सुंदर बनाने का प्रयास करेंगे ।

– प्रसिद्ध गायक श्री अनूप जलोटा

✻ पूज्य बापूजी के आगामी कार्यक्रम ✻

दिनांक	स्थान	सत्संग-स्थल	सम्पर्क
३ मई	वसई (वेस्ट), ठाणे	सनसिटी, १०० फीट रोड	(०२५०) ६४५१४४४, ९३२२२९७३२१
४ मई (सुबह ९ से)	बिलिया, जि. पाटण (गुज.)	प्राथमिक कुमार शाला, तह. सिद्धपुर	९९२५९०५६४६, ९८२५१४५८४२
४ (शाम ४) से ५ मई (सुबह ६ से ८)	सूरत (पूर्णिमा-दर्शन व सत्संग)	संत श्री आशारामजी आश्रम, आश्रम रोड, जहाँगीरपुरा	(०२६१) २७७२२०१-०२, ९३७६५१६७२३
५ मई (सुबह ९-३० से ११-३० तक)	अहमदाबाद (पूर्णिमा-दर्शन व सत्संग)	संत श्री आशारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती	(०७९) ३९८७७७८८, २७५०५०१०-११
५ मई (दोप. ३ से ५)	नई दिल्ली (पूर्णिमा-दर्शन व सत्संग)	संत श्री आशारामजी आश्रम, वन्दे मातरम् रोड, करोलबाग	(०११) २५७२९३३८, ९५५५२०८८७६
६ से ९ मई	हरिद्वार (पूर्णिमा-दर्शन व सत्संग)	पंतद्वीप, भीमगौड़ा	९३६८२१३००८, ८४३०२८८८६६

कृतघ्नता का फल मिला

पूज्य सद्गुरुदेव के श्रीचरणों में सादर प्रणाम !

मेरे एक मित्र को गले का कैंसर हो गया था । डॉक्टरों ने जवाब दे दिया और उसे घर ले आये । मैं उससे मिलने गया । मैंने पूज्य बापूजी की एक मनमोहक तस्वीर देकर उससे कहा : ''इनकी ओर प्रेम से केवल देखते रहना, सारे कार्य ठीक हो जायेंगे ।'' उसने ऐसा ही किया ।

बाद में उसने बताया कि ''उसी रात ढाई बजे यही बाबा सपने में आये । टेबल पर रखे पानी के गिलास की ओर इशारा करके बोले : 'इसे पी जाओ ।' जबकि मैं पानी नहीं पी सकता था पर उनके कहने पर मैं आहिस्ते-आहिस्ते टेबल तक गया और घूँट-घूँट करके पानी पीने लगा । पीते समय मुझे एहसास हो रहा था मानो कैंसर की गाँठें गले से टूटकर गिरती जा रही हैं । मैं पानी पीकर सो गया । दूसरे दिन से मैं सामान्य रूप से खाने-पीने लगा ।''

घरवाले फिर उसे अस्पताल ले गये । जाँच के बाद डॉक्टर हैरान रह गये कि 'इसका कैंसर कहाँ गया !' फिर उन्होंने कहा कि 'अब यह सामान्य जीवन जी सकता है ।'

कुछ दिन बाद वह मेरे घर बापूजी की तस्वीर वापस करने आया । मैं घर पर नहीं था । मेरी बेटी को उसने बापूजी की तस्वीर फेंककर दी और कहा : ''अब यह तस्वीर मुझे नहीं चाहिए, मेरा काम हो गया ।'' तस्वीर पलंग पर न जाकर जमीन पर गिर गयी और वह लौट गया । तीन दिन बाद मालूम पड़ा कि वह मर गया । अस्पताल की चेकअप रिपोर्ट से पता चला कि ठीक हुआ कैंसर पुनः हो गया था । इस बार फोड़ा होकर सड़ गया था, जिससे पूरे शरीर में जहर फैल गया और उसकी मौत हो गयी । संत की कृपा पाकर उनका एहसान तो न माना, उलटा अपमान किया तो भगवान ने कृतघ्नता का फल उसे दे दिया ।

– हरपाल सिंह, पंचकुला (हरि.) □

पत्रिका नहीं प्रभु का रसमय प्रसाद है

॥ ऋषि प्रसाद ॥

पहले मेरी रुचि हमेशा गंदे, अश्लील साहित्य व पत्र-पत्रिकाएँ पढ़ने में रहती थी । मन में सदा बुरे विचार आते रहते थे । एक दिन मेरा छोटा भाई, जो पहले से ही बापूजी का भक्त था, **'ऋषि प्रसाद'** लेकर आया । मैंने पढ़ी तो बहुत अच्छा लगा, मन को शांति मिली । रस आने लगा तो हर माह पढ़ने लगा । इसके पठन से अश्लील साहित्य पढ़ने की गंदी आदत छूट गयी । अश्लील आकर्षण, विकार छूटते गये और भगवच्चिंतन स्वतः होने लगा । कुछ ही दिनों में मेरे जीवन में अनोखा परिवर्तन आ गया । पूज्य बापूजी के श्रीचरणों में मेरी प्रीति हो गयी । फिर तो मैंने इसकी आजीवन सदस्यता ले ली । अब तो हर माह की **'ऋषि प्रसाद'** को सँभालकर रखता हूँ ।

पूज्य बापूजी के कृपा-प्रसाद से मेरा जीवन बरबाद होने से बच गया । उनके श्रीचरणों में मेरे कोटि-कोटि दंडवत् प्रणाम ! **– सूरजलाल गौड़, बुरहानपुर (म.प्र.) मो. : ९००९४०७१०१**

आज्ञापालन ने दे डाला सब कुछ

सन् १९९६ में मुझे पहली बार बापूजी के दर्शन हुए। सारनाथ में मैंने पूज्यश्री से कुछ आध्यात्मिक उद्देश्य से बात की। बापूजी ने कहा : ''तुम दीक्षा लो, वह सब पूर्ण होगा।'' दूसरे दिन ही मैंने पत्नीसहित मंत्रदीक्षा ले ली। तब से लगभग प्रत्येक उत्तरायण शिविर में मैं अहमदाबाद आश्रम जाता हूँ। २००३ के उत्तरायण शिविर में प्रातः जब मैं पंडाल में बैठा हुआ था, अचानक पूज्य बापूजी आये और टॉर्च की रोशनी मेरे ऊपर डालते हुए पूछा : ''गोरा ! तू कहाँ से आया है और क्या चाहता है ?''

मेरी आँखों से झर-झर प्रेमाश्रु बहने लगे, जिससे मैं कुछ बोल न सका। आगे जाकर बापूजी ने सेवक के द्वारा संदेशा भेजा कि मैं दोपहर में पूज्यश्री से मिलूँ। मिलने पर मुझे बापूजी से साधनाविषयक मार्गदर्शन मिला। मैंने कृपा-वचन के अनुसार गुरुदेव के श्रीचित्र पर प्रतिदिन ४० मिनट त्राटक की साधना शुरू की। ध्यान, अजपाजप व विचाररहित अवस्था का अभ्यास करते-करते सोने तथा प्रातः जागने पर विचाररहित अवस्था में ज्यादा देर रहने का अभ्यास भी बनाया। उससे दफ्तर के कामकाज के समय भी यह अवस्था रहने लगी। दुःख-चिंता न जाने कहाँ गायब हो गये ! मन में समता, शीतलता रहने लगी। कभी-कभी पूरी रात जप करता था। सभी एकादशियों व शिवरात्रि को निर्जल उपवास करने लगा। गुरुकृपा से बहुत-से आध्यात्मिक अनुभव हुए हैं और रोज होते रहते हैं, जिनका वर्णन असम्भव है। मेरे सर्वस्व बापूजी ही हैं।

योग-सामर्थ्यसम्पन्न बापूजी की कृपा से हर कठिन समस्या का समाधान हो जाता है। जब भी कोई समस्या आती है तो मैं अपने मन के अनुकूल व विपरीत विकल्प की पुड़िया बनाकर गुरुदेव की चरणपादुका के सामने रख देता हूँ। प्रार्थना व दंडवत् प्रणाम करने के बाद आँख बंद करके एक पुड़िया उठा लेता हूँ। फिर पुड़िया में लिखी बात भले मेरे प्रतिकूल क्यों न हो, मैं वही करता हूँ। सबके सच्चे हितैषी पूज्य बापूजी की कृपा से बाद में वह स्थिति अनुकूल हो जाती है। पिछले ६ वर्षों से भौतिक जगत की कोई भी चीज, जिसकी प्राप्ति का मन में संकल्प हो जाता है, वही-की-वही अथवा वैसी ही चीज शीघ्र ही मेरे सामने उपस्थित हो जाती है। जितने भी मेरे ऊपरी अधिकारी हैं, वे मेरे अनुकूल हो जाते हैं। यदि कोई अवरोधरूप भी बनता है तो उनका तबादला हो जाता है।

मेरी माताजी को १० वर्ष पहले लकवा था परंतु बापूजी द्वारा सत्संग में बताये गये स्वास्थ्य-मंत्र से अभिमंत्रित जल मैं माताजी को नित्य पिलाने लगा तो बिल्कुल जादू हो गया ! दौरे बंद हो गये और कुछ ही दिनों में दवाई लेना बंद कर दिया।

दीनवत्सल पूज्य गुरुदेव के श्रीचरणों में मेरे कोटि-कोटि प्रणाम ! **– धर्मेन्द्र त्रिपाठी**

मुख्य कोषाधिकारी (उ.प्र. वित्त सेवा),
विंध्याचल मंडल, मिर्जापुर (उ.प्र.)
मो. : ०९८३९२९६८३९

(एक जिले का अनुदान प्रतिमाह लगभग १०० करोड़ रुपये से भी अधिक होता है, जिसका भुगतान आप जैसे ईमानदार अधिकारी के हस्ताक्षर से किया जाता है। **– सम्पादक**)

शुभ संदेश

परम पूज्य संत श्री आशारामजी बापू का ७२वाँ अवतरण-दिवस 'सेवा दिवस' के रूप में मनाया जा रहा है, यह बड़े ही हर्ष की बात है। पूज्यश्री ऐसे महापुरुष हैं जिन्होंने अपने शिष्यों को भक्तियोग और ज्ञानयोग के साथ-साथ कर्मयोग भी सिखाया है। अवतरण-दिवस पर भोजन-प्रसाद का वितरण कर आध्यात्मिक जागृति हेतु हरिनाम संकीर्तन यात्राएँ आदि निकाली जाती हैं। मैं पूज्यश्री की दीर्घायु की कामना कर उन्हें बधाइयाँ देता हूँ।

– श्री नितीन गडकरी, राष्ट्रीय अध्यक्ष, भाजपा

नींबू से स्वास्थ्य-लाभ

नींबू उत्तम पित्तशामक, वातानुलोमक, जठराग्निवर्धक व आमपाचक है। यह अम्लरसयुक्त (खट्टा) होने पर भी पेट में जाने के बाद मधुर हो जाता है। मंदाग्नि, अजीर्ण, उदरवायु, पेट में दर्द, उलटी, कब्ज, हैजा आदि पेट के रोगों में यह औषधवत् काम करता है। हृदय, रक्तवाहिनियों व यकृत (लीवर) की शुद्धि करता है। इसमें पर्याप्त मात्रा में स्थित विटामिन 'सी' रोगप्रतिकारक शक्ति बढ़ाता है। यह जंतुनाशक भी है। प्रातः खाली पेट नींबू का रस पानी में मिलाकर पीने से आँतों में संचित विषैले पदार्थ नष्ट हो जाते हैं तथा रक्त शुद्ध होने से सम्पूर्ण शरीर की ही सफाई हो जाती है, मांसपेशियों को नया बल मिलता है। इससे शरीर में स्फूर्ति व ताजगी आती है।

औषधीय प्रयोग

दाँतों के रोग : (१) नींबू के रस को ताजे जल में मिलाकर कुल्ले करने से दाँतों के अनेक रोगों में लाभ होता है। मुख की दुर्गंध दूर होती है।

(२) निचोड़े हुए ताजे नींबू के छिलके से दाँतों को रगड़ने से अथवा छिलकों को सुखाकर कूट-पीस के उससे मंजन करने से दाँत मजबूत, साफ व सफेद हो जाते हैं।

(३) नींबू का रस, सरसों का तेल व पिसा नमक मिलाकर रोज मंजन करने से दाँतों के रोग दूर होकर दाँत मजबूत व चमकदार बनते हैं।

(४) पायरिया में मसूड़ों पर नींबू का रस मलते रहने से रक्त व मवाद का स्राव रुक जाता है।

पुरानी खाँसी : एक चम्मच नींबू के रस में दो चम्मच शहद मिलाकर लेने से पुरानी खाँसी में लाभ होता है।

जुकाम : गुनगुने पानी में नींबू का रस व शहद मिलाकर पीने से शीघ्र लाभ होता है।

सिरदर्द : नींबू के दो समान टुकड़े कर उन्हें थोड़ा गर्म करके सिर व कनपटियों पर लगाने से सिरदर्द में आराम मिलता है।

गले की तकलीफें : गले की सूजन, गला बैठ जाना आदि में गर्म पानी में नींबू का रस व नमक मिलाकर गरारे करने चाहिए। जिन्हें खाँसी में पतला कफ निकलता हो उन्हें यह प्रयोग नहीं करना चाहिए।

उच्च रक्तचाप : (१) किसी भी प्रकार से नींबू के रस का प्रयोग करने से रक्तवाहिनियाँ कोमल व लचकदार हो जाती हैं। हृदयाघात (हार्ट-अटैक) होने का भय नहीं रहता व रक्तचाप सामान्य बना रहता है।

(२) नींबू का रस, शहद व अदरक का रस तीनों एक-एक चम्मच गुनगुने पानी में मिलाकर सप्ताह में २-३ दिन पियें। यह पेट के रोग, उच्च रक्तचाप, हृदयरोग के लिए एक उत्तम टॉनिक है।

बाल गिरना : नींबू का रस सिर के बालों की जड़ों में रगड़कर १० मिनट बाद धोने से बालों का पकना, टूटना या जुएँ पड़ना दूर होता है।

सिर की रूसी : सिर पर नींबू का रस और सरसों का तेल समभाग मिलाकर लगाने व बाद में दही रगड़कर धोने से कुछ ही दिनों में सिर की रूसी दूर हो जाती है।

पेटदर्द, मंदाग्नि : एक गिलास पानी में दो चम्मच नींबू का रस, एक चम्मच अदरक का रस व शक्कर डालकर पीने से पेटदर्द में आराम होता है, जठराग्नि प्रदीप्त होती है, भूख खुलकर लगती है।

मोटापा एवं पुराना कब्ज : एक गिलास गुनगुने पानी में एक नींबू का रस एवं दो चम्मच शहद डालकर पीने से शरीर की अनावश्यक चर्बी कम होती है एवं पुराना कब्ज मिटता है।

दाद-खाज : नींबू के रस में इमली के बीज पीसकर लगाने से लाभ होता है ।

त्वचा-विकार : नींबू के रस में नारियल का तेल मिलाकर शरीर पर उसकी मालिश करने से त्वचा की शुष्कता, खुजली आदि रोगों में लाभ होता है ।

अजीर्ण : भोजन से पूर्व अदरक, सेंधा नमक व नींबू का रस मिलाकर लें ।

पित्त-विकार : नींबू के शरबत में अदरक का रस व सेंधा नमक मिलाकर सुबह खाली पेट लें ।

स्वास्थ्य-प्रदायक पेय : एक गिलास गुनगुने पानी में एक नींबू का रस व २५ तुलसी के पत्तों का रस मिलाकर सुबह खाली पेट पीने से हृदय की रक्तवाहिनियों का अवरोध (blockage) दूर हो जाता है । यह प्रयोग हफ्ते में २-३ बार नियमित रूप से करें । इससे अतिरिक्त चर्बी व चर्बी की गाँठें (lipoma) भी पिघल जाती हैं ।

मोटे व्यक्तियों व हृदयरोगियों के लिए यह प्रयोग वरदानस्वरूप है । स्तन की गाँठें, गर्भाशय की गाँठें, अंडाशय गाँठ (ovarian cyst) में भी इस प्रयोग के अद्भुत लाभ मिले हैं । इस स्वास्थ्य-प्रदायक पेय में २ से ३ सफेद मिर्च का चूर्ण मिलाकर पीने से कैंसर की गाँठों (अर्बुद) में भी लाभ मिलता है । इसके साथ गोझरण अर्क का सेवन, पथ्यकर आहार व प्राणायाम आवश्यक हैं ।

सावधानी : कफ, खाँसी, दमा, शरीर में दर्द के स्थायी रोगियों को नींबू नहीं लेना चाहिए । □

सुख-समृद्धि, बरकत और मन की शांति के लिए

(१) अशोक, आम, पीपल एवं कनेर के पत्तों को धागे में बाँधकर तोरण (बंदनवार) बना के मकान के मुख्य द्वार पर लटकाने से घर में सुख-सम्पन्नता के साथ-साथ मन की शांति भी प्राप्त होती है ।

(२) प्रतिदिन भोजन से पूर्व गोग्रास निकालने पर घर में सुख-समृद्धि एवं मान-सम्मान की वृद्धि होती है ।

संस्था समाचार

('ऋषि प्रसाद' प्रतिनिधि)

व्यापारिक दृष्टिकोण से **३१ मार्च** वर्ष भर की लाभ-हानि के आकलन का दिन होता है परंतु **थराद (गुज.)** वासियों ने इस दिन अपने जीवन के परम लाभ ब्रह्मज्ञानी संत श्री बापूजी के दर्शन-सत्संग को पाकर वर्ष ही नहीं अपितु जीवन को धन्य किया और यहाँ पूज्यश्री द्वारा प्रथम आगमन के समय कहे गये वचनों को याद कर गद्गद हो गये । उल्लेखनीय है कि बापूजी ने थराद आश्रम की स्थापना के अवसर पर कहा था कि ''भले अभी पीने के पानी की किल्लत है लेकिन यहाँ नहर आयेगी और सब कुछ ठीक हो जायेगा ।'' और हुआ भी ऐसा ही ।

१ अप्रैल को **रापर, कच्छ (गुज.)** में सत्संग के बाद **२ अप्रैल (सुबह)** को कच्छ के छोटे गाँव **छाड़वारा**वासियों के लिए यह दिन होली या दिवाली जैसे पर्व से कम नहीं था । जिसे देखो वह बापूजी के दर्शन-सत्संग हेतु सत्संग-स्थल की तरफ पहुँच रहा था । हेलिकॉप्टर सत्संग-स्थल पर उतरते ही विशाल जनसैलाब पूज्यश्री के दर्शन के लिए उमड़ पड़ा, मानो पूरा गाँव ही सत्संग-स्थल पर पहुँच गया हो ।

सौराष्ट्र में सत्संग-वर्षा की शुरुआत बापूजी ने **२ अप्रैल (शाम)** को **गोंडल** से की । इसके बाद **३ से ६ अप्रैल (सुबह तक)** भगवान श्रीकृष्ण की पावन नगरी **द्वारका** धाम और समुद्र-तट पर योगिराज, ब्रह्मनिष्ठ तथा वेदांत के मर्मज्ञ पूज्य बापूजी के सान्निध्य में साधकों ने ध्यान व तत्त्वज्ञान के महासागर की गहराइयों में गोता लगाया । इस पूनम पर जहाँ एक ओर दिल्ली से साधकों की विशेष रेलगाड़ी द्वारका पहुँची, वहीं दूसरी तरफ भवसागर से पार लगानेवाले पूज्यश्री ने समुद्री बेट द्वारका में नाव-यात्रा द्वारा साधकों को नौका-विहार एवं दर्शन का लाभ दिया । वह दृश्य तो देखते ही बनता था ! हजारों-हजारों साधक एक साथ सामुद्रिक लहरों में भगवदीय लहरें मिलाकर झूम रहे थे, झूल रहे थे । बापूजी ने एक बड़ी मोटरबोट

चला के हजारों साधकों को चकित, आह्लादित, आनंदित कर दिया। यहाँ बापूजी बोले : ''भगवान के ध्यान से, भगवान के नाम से और भगवान के प्यारे संतों के संग से अंदर बहुत दिव्य परिवर्तन होता है।''

पूनम एक, बापूजी एक, लेकिन दर्शन-सत्संग कार्यक्रम छः ! ऐसी करुणा-कृपा बरसायी बापूजी ने पावन चैत्री पूर्णिमा व हनुमान जयंती पर। कहते हैं : **'संत हृदय नवनीत समाना।'** परंतु मक्खन तो स्वयं के ताप और गर्मी से पिघलता है जबकि सबके सुहृद, करुणासिंधु बापूजी का हृदय परदुःखकातरतावश तथा भक्तों की प्रार्थना से ही पिघल जाता है। ऐसा ही देखने को मिला इस पूर्णिमा पर। लोगों को कष्ट न हो इसलिए बापूजी ने खुद तकलीफ सहते हुए **६ तारीख** को **सुबह** ९.३० तक **द्वारका**, १२ बजे **राजकोट**, **दोपहर** १.३० बजे तक **अहमदाबाद** में पूर्णिमा-दर्शन दिया और तत्पश्चात् **दिल्ली** के लिए प्रस्थान किया। वहाँ इंदिरा गांधी हवाई अड्डे पर व हेली पैड पर भी दर्शनार्थियों की उमड़ी भीड़ ने पूज्यश्री के दर्शन का लाभ लिया। और अंत में **६ तारीख** की ही **शाम** को **लोनी, गाजियाबाद** के विशाल पंडाल में कृपासिंधु बापूजी ने रेलगाड़ी में घूम-घूमकर दर्शन-सत्संग की रहमत बरसायी।

६ अप्रैल (दोप.) को **अहमदाबाद** में पूज्यश्री भय, शोक, चिंता का मूल कारण बताते हुए बोले : ''सृष्टि की व्यवस्था है मिल-मिलकर बिछुड़ना, इसीसे विकास है लेकिन बिछुड़ जाने में मन आड़े आता है, इसीसे शोक होता है। 'यह चीज चली न जाय, इज्जत चली न जाय, फलाना चला न जाय, ऐसा हो न जाय...'- इस कारण भय होता है। तो भय, शोक, चिंता का मूल नासमझी है। वास्तव में विधाता का जो विधान है वह इतना मंगलकारी है, इतना सुखकारी है, इतना कल्याणकारी है कि उसका वर्णन करने के लिए कई सप्ताह सत्संग चलता रहेगा फिर भी पूरा वर्णन नहीं हो सकेगा।''

६ (शाम) से ८ अप्रैल तक **लोनी, गाजियाबाद** में सत्संग हुआ। लोनी की सामाजिक स्थिति व वहाँ की सड़कें, बिजली आदि मूलभूत आवश्यकताओं को लेकर बापूजी का हृदय द्रवीभूत हो गया। मानव-जीवन का उद्देश्य बताते हुए पूज्यश्री बोले : ''मनुष्य-जीवन पैसा कमाकर मकान बना के मर जाने के लिए और पशु बनने के लिए नहीं है, कंगाल होने के लिए नहीं है, अमीर होने के लिए नहीं है, सुखी-दुःखी होने के लिए नहीं है अपितु सुख-दुःख के ऊपर पैर रख के सुख को सपना, दुःख को बुलबुला समझकर सुख-दुःख को जो जानता है उस अंतरात्मा-परमात्मा से प्रीति करने के लिए, उसमें विश्रांति पाने के लिए है।''

१० व ११ अप्रैल को मालवा क्षेत्र के **इन्दौर** में बापूजी का अवतरण-दिवस बड़ी धूमधाम से मनाया गया। इन्दौरवासियों ने दिये जलाये तथा सम्पूर्ण विश्व में यह दिन 'सेवा-सत्संग दिवस' के रूप में मनाया गया। बापूजी ने महापुरुषों के जीवन से प्रेरणा लेकर अपने जीवन को भी दिव्य बनाने की कुंजी देते हुए कहा : ''आपके जन्म और कर्म दिव्य हों। भगवान कहते हैं :

जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः।

मेरा जन्म और कर्म दिव्य है ऐसा जो तत्त्व से जानता है, वह मुझे प्राप्त हो जाता है और उसके भी जन्म और कर्म दिव्य हो जाते हैं। तो देशवासियों और विश्ववासियों से मेरी प्रार्थना है कि अपने कर्मों को देह, परिवार की सीमा में फँसाओ मत अपितु कर्मों को ईश्वर की प्रीति के लिए, 'बहुजनहिताय बहुजनसुखाय' करके कर्मयोग बनाओ।''

१४ व १५ अप्रैल को अपने प्यारे सद्गुरुदेव को अपने बीच पाकर **लखनऊ**वासियों का मन-मयूर झूम उठा। सम्पूर्ण राजधानी 'हरि ॐ' मय हो गयी। यहाँ प्रत्येक परिस्थिति की समीक्षा करने की सीख देते हुए पूज्यश्री बोले : ''आप लोग भगवान की कृपा के लिए प्रतीक्षा मत करो; प्रतीक्षा करके परेशान मत होओ। भगवान की कृपा न जाने कब-कब, किस-किस रूप में दिन में कई बार बरसती रहती है। प्रतीक्षा के चक्कर में मत पड़ो। सुखी होने की भी प्रतीक्षा के चक्कर में मत पड़ो, समीक्षा करो कि हर परिस्थिति सुख को समझने के लिए आती है। हर

परिस्थिति हमें सुख-दुःख में सम बनाने के लिए आती है। भगवान की प्रतीक्षा मत करो, हर समय वे मौजूद हैं। हर अँगड़ाई में भगवान का हाथ है।''

१७ अप्रैल को **गोंडा** के नवनिर्मित आश्रम में सत्संग के बाद **१८ अप्रैल (सुबह)** को भगवान श्रीराम की पावन जन्मस्थली **अयोध्या** धाम में जहाँ प्रमुख अखाड़ों, मठ-मंदिरों, वेद-विद्यालयों ने बापूजी का स्वागत किया, वहीं सत्संग के सत्र में संतों-महंतों, आचार्यों ने 'जय-जय सियाराम, दंडवत् महाराज...' और वैदिक मंगलाचरण के साथ बापूजी का अभिनंदन किया। पूज्य बापूजी ने भी सहर्ष अभिवादन स्वीकार करते हुए कहा :

''एक राम घट-घट में बोले,
दूजो राम दशरथ घर डोले।
तीसर राम का सकल पसारा,
ब्रह्म राम है सबसे न्यारा॥''

बापूजी ने अपने चिर-परिचित अंदाज में भगवान राम के वास्तविक स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए कहा :

''वही राम घट-घट में बोले,
वही राम दशरथ घर डोले।
उसी राम का सकल पसारा,
वही राम है सबसे न्यारा॥

जो राम रोम-रोम में रम रहा है वही राम है। शरीर मरता है फिर भी जो कभी नहीं मरता वही आत्माराम है। सुख-दुःख, बचपन-जवानी-बुढ़ापा आता-जाता है लेकिन इन सबको जाननेवाला जो आत्माराम है, जो कभी नहीं बदलता वह है राम और वह कहीं दूर नहीं, दुर्लभ नहीं, परे नहीं, पराया नहीं है। वह सबका अंतरात्मा होकर बैठा है। बस, उसे आप अपना मान लो।''

१८ अप्रैल (शाम) को **बस्ती** तथा **१९ व २० अप्रैल** को जोगी गोरखनाथ की पावन नगरी **गोरखपुर** में पूज्य बापूजी ने सरल, हृदयंगम शैली में सत्संग-अमृत का पान कराया तथा साधकों को प्रश्नोत्तरी का अवसर प्रदान कर जिज्ञासा का समाधान करके उनके लिए साधना का मार्ग प्रशस्त किया।

भैरहवा, नेपाल के साधकों की लम्बे समय की प्रार्थना फलीभूत हुई और दिनांक **२१ अप्रैल** को यहाँ सत्संग आयोजित हुआ तो श्रद्धालुओं व साधकों की खुशी का पारावार न रहा। यहाँ बापूजी ने नवनिर्मित आश्रम में रात्रि-विश्राम कर आश्रम को अपने आध्यात्मिक स्पंदनों से तीर्थत्व प्रदान किया। आश्रम के उद्घाटन के अवसर पर सत्संग-अमृत का पान कराते हुए पूज्यश्री ने कहा : ''दुःख की पराकाष्ठा ही सुख के प्रादुर्भाव का मार्ग बनाती है। इसके लिए भारी साधना नहीं सद्भाव, स्नेह की जरूरत होती है। यह मत देखो कि कौन क्या कह और कर रहा है, तुम्हें अपने कर्म पर ध्यान देने की जरूरत है। निरर्थक किया गया कर्म बेकार हो जाता है, जिस तरह घड़ियों में लगा पेंडुलम चलता तो दिन-रात है लेकिन बिना मतलब !''

२२ (दोप.) से २३ अप्रैल (सुबह) जौनपुर (उ.प्र.) में सत्संग-आयोजन हुआ। जौनपुरवासियों के लिए सत्संग का यह पहला सुवर्ण-अवसर था। यहाँ श्रद्धालुओं का उत्साह देखते ही बनता था। पूरे नगर में जहाँ देखो बस, 'हरि ॐ... हरि ॐ...' की मंगलमय ध्वनि गूँज रही थी। सत्संग में बड़ी संख्या में नगरवासियों के साथ दूर-दराज से पहुँचे ग्रामीणों ने लाभ लिया। इस अवसर पर **करकट** स्थित नवनिर्मित आश्रम का भी उद्घाटन हुआ। **२३ अप्रैल (दोप.)** को **उदयचंदपुर (उ.प्र.)** में सत्संग हुआ।

२४ व २५ अप्रैल को भगवान शिव की पावन नगरी **वाराणसी (उ.प्र.)** में ज्ञानगंगा बहाते हुए पूज्य बापूजी ने भगवान विश्वनाथ के वास्तविक स्वरूप को जानने पर जोर देते हुए कहा : ''जो कल्याणकारी है वह शिव है और वह आपका अंतरात्मा होकर बैठा है।'' संत-दर्शन, सत्संग और संतों के अद्भुत सामर्थ्य पर प्रकाश डालते हुए पूज्यश्री ने तैलंग स्वामी, भास्करानंदजी, विशुद्धानंदजी, गोपीनाथ कविराज जिनका दर्शन-सत्संग करके लाभ लेते थे ऐसे हरिहर बाबा के हरि-स्नेह, हरि-सामर्थ्य एवं हरि-लीलाओं पर प्रकाश डाला। □

पूज्य बापूजी के सत्संग में उमड़ा जनसागर

इन्दौर (म.प्र.)

लखनऊ (उ.प्र.)

लोनी, गाजियाबाद (उ.प्र.)

द्वारका (गुज.)

गोरखपुर (उ.प्र.)

अयोध्या (उ.प्र.)